इस्लाम
आतंक
या
आदर्श?

लेखक

स्वामी लक्ष्मीशंकराचार्य

प्रकाशक

ओम प्रकाश अवस्थी

टी-3, 28 टी.बी. कालोनी

साइट नं०-1, क़िदवई नगर, कानपुर (यू.पी.)

ISLAM AATANK YA AADARSH? (HINDI)

• • •

पुस्तक मंगाने के लिए सम्पर्क करें

09212117559 09212567559

e-mail : mssbookservice@gmail.com

संस्करण : 2010 ई॰

पृष्ठ : 96

मूल्य : 100.00

मुद्रक : एच. एस. आफसेट, नई दिल्ली

विषय-सूची

कुछ इस्लामी पारिभाषिक शब्द

ईमान: विश्वास, आस्था, मानना। ईमान वास्तव में पुष्टि करने और मानने को कहते हैं। इसका विलोम है इनकार, झुठलाना, कुफ़्र आदि। इस्लाम की शिक्षाओं को जो कि ईश्वर की ओर से आई हैं, उन्हें मानना और सच्चे दिल से स्वीकार करना।

किताबवाले (अहले-किताब): वे लोग जिन्हें अल्लाह की ओर से किताब प्रदान हुई थी। यह संकेत है यहूदियों और ईसाइयों की ओर जिन्हें अल्लाह ने तौरेत और इनजील नामक किताबें प्रदान की थीं।

काफ़िर: कुफ़्र करनेवाला, इनकार करनेवाला, सच्चाई को छिपानेवाला, अकृतज्ञ। वे लोग जो उन सच्चाइयों को मानने और स्वीकार करने से इनकार करते हैं जिनकी शिक्षा ईश्वर के पैग़म्बर ने दी है। 'काफ़िर' शब्द व्याकरण की दृष्टि से गुणवाचक संज्ञा है, यह अपमानबोधक शब्द नहीं है। क़ुरआन में जहाँ भी ईश्वर और उसकी शिक्षाओं और उसके आदेशों का इनकार करनेवालों के लिए 'काफ़िर' शब्द प्रयुक्त हुआ है तो उसका उद्देश्य गाली, घृणा और निरादर नहीं है, बल्कि उनके इनकार करने के कारण वास्तविकता प्रकट करने के लिए ऐसा कहा गया है। 'काफ़िर' शब्द हिन्दू का पर्यायवाची भी नहीं है जैसा कि दुष्प्रचार किया जाता है। 'काफ़िर' शब्द का लगभग पर्यायवाची शब्द 'नास्तिक' है। इस्लाम की दृष्टि में किसी व्यक्ति के मात्र इस इनकार के कारण न तो उसे इस दुनिया में कोई सज़ा दी जा सकती है और न किसी मानवीय अधिकार से उसे वंचित रखा जा सकता है। वह सांसारिक मामलों में समानाधिकार रखता है।

हर धर्म में उस धर्म की मौलिक धारणाओं एवं शिक्षाओं को माननेवालों और न माननेवालों के लिए अलग-अलग विशेष शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं। जैसे, हिन्दू धर्म में उन लोगों के लिए नास्तिक, अनार्य, असभ्य, दस्यु और मलिच्छ शब्द प्रयुक्त हुए हैं जो हिन्दू धर्म के अनुयायी न हों।

रसूल, नबी: पैग़म्बर, दूत, वह व्यक्ति जो पैग़म्बरी के पद पर नियुक्त हो। वह व्यक्ति जिसके द्वारा परमेश्वर लोगों को अपना मार्ग दिखाता और उन तक अपना संदेश पहुँचाता है।

जिहाद: जानतोड़ कोशिश, ध्येय की सिद्धि के लिए सम्पूर्ण शक्ति लगा देना। युद्ध के लिए क़ुरआन में 'क़िताल' शब्द प्रयुक्त हुआ है। जिहाद का अर्थ क़िताल के अर्थ से कहीं अधिक विस्तृत है। जो व्यक्ति सत्य के लिए अपने धन, अपनी लेखनी, अपनी वाणी आदि से प्रयत्नशील हो और इसके लिए अपने को थकाता हो वह जिहाद ही कर रहा है। सत्य के लिए युद्ध भी करना पड़ सकता है और उसके लिए प्राणों का बलिदान भी किया जा सकता है। यह भी जिहाद का एक अंग है। जिहाद को उसी समय इस्लामी जिहाद कहा जाएगा जबकि वह ईश्वर के लिए हो और ईश्वर के दिए हुए निर्देशों के अनुसार हो, न कि धन-दौलत की प्राप्ति के लिए हो।

जब मुझे सत्य का ज्ञान हुआ

कई साल पहले दैनिक जागरण में श्री बलराज मधोक का लेख 'दंगे क्यों होते हैं?' पढ़ा था। इस लेख में हिन्दू-मुस्लिम दंगा होने का कारण क़ुरआन मजीद में काफ़िरों से लड़ने के लिए अल्लाह के फ़रमान बताए गए थे। लेख में क़ुरआन मजीद की वे आयतें भी दी गई थीं।

इसके बाद दिल्ली से प्रकाशित एक पैम्फ़लेट (पर्चा) 'क़ुरआन की चौबीस आयतें, जो अन्य धर्मावलम्बियों से झगड़ा करने का आदेश देती हैं' किसी व्यक्ति ने मुझे दिया। इसे पढ़ने के बाद मेरे मन में जिज्ञासा हुई कि मैं क़ुरआन पढ़ूँ। इस्लामी पुस्तकों की दुकान से क़ुरआन का हिन्दी अनुवाद मुझे मिला। क़ुरआन मजीद के इस हिन्दी अनुवाद में वे सभी आयतें मिलीं, जो पैम्फ़लेट में लिखी थीं। इससे मेरे मन में यह ग़लत धारणा बनी कि इतिहास में हिन्दू राजाओं व मुस्लिम बादशाहों के बीच जंग में हुई मार-काट तथा आज के दंगों और आतंकवाद का कारण इस्लाम है। दिमाग़ भ्रमित हो चुका था, इसलिए हर आतंकवादी घटना मुझे इस्लाम से जुड़ती दिखाई देने लगी।

इस्लाम, इतिहास और आज की घटनाओं को जोड़ते हुए मैंने एक पुस्तक लिख डाली 'इस्लामिक आतंकवाद का इतिहास' जिसका अंग्रेज़ी अनुवाद 'The History of Islamic Terrorism' के नाम से सुदर्शन प्रकाशन, सीता कुंज, लिबर्टी गार्डेन, रोड नम्बर-3, मलाड (पश्चिम), मुम्बई 400064 से प्रकाशित हुआ।

हाल में मैंने इस्लाम धर्म के विद्वानों (उलमा) के बयानों को पढ़ा कि इस्लाम का आतंकवाद से कोई सम्बन्ध नहीं है। इस्लाम प्रेम, सद्भावना व भाईचारे का धर्म है। किसी बेगुनाह को मारना इस्लाम धर्म के विरुद्ध है। आतंकवाद के ख़िलाफ़ फ़तवा (धर्मादेश) भी जारी हुआ।

इसके बाद मैंने क़ुरआन मजीद में जिहाद के लिए आई आयतों के बारे में जानने के लिए मुस्लिम विद्वानों से सम्पर्क किया, जिन्होंने मुझे बताया कि क़ुरआन मजीद की आयतें भिन्न-भिन्न तत्कालीन परिस्थितियों में उतरीं। इसलिए क़ुरआन मजीद का केवल अनुवाद ही न देखकर यह भी देखा जाना ज़रूरी है कि कौन-सी आयत किस परिस्थिति में उतरी, तभी उसका सही मतलब और मक़सद पता चल पाएगा।

साथ ही ध्यान देने योग्य है कि क़ुरआन इस्लाम के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०)[1] पर उतारा गया था। अत: क़ुरआन को सही मायने में जानने के लिए पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी से परिचित होना भी ज़रूरी है।

विद्वानों ने मुझसे कहा, ''आपने क़ुरआन मजीद की जिन आयतों का हिन्दी अनुवाद अपनी किताब में लिया है, वे आयतें उन अत्याचारी काफ़िर और मुशरिक लोगों के लिए उतारी गईं जो अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से लड़ाई करते और मुल्क में फ़साद करने के लिए दौड़ते फिरते थे। सत्य-धर्म की राह में रोड़ा डालनेवाले ऐसे लोगों के विरुद्ध ही क़ुरआन में जिहाद का फ़रमान है।''

उन्होंने मुझसे कहा कि इस्लाम की सही जानकारी न होने के कारण लोग क़ुरआन मजीद की पवित्र आयतों का मतलब समझ नहीं पाते। यदि आपने पूरे क़ुरआन मजीद के साथ हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी भी पढ़ी होती, तो आप भ्रमित न होते।

मुस्लिम विद्वानों के सुझाव के अनुसार मैंने सबसे पहले पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी पढ़ी।[2] जीवनी पढ़ने के बाद इसी नज़रिए से जब मन की शुद्धता के साथ क़ुरआन मजीद शुरू से अन्त तक पढ़ा, तो मुझे क़ुरआन मजीद की आयतों का सही मतलब और मक़सद समझ में आने लगा।

सत्य सामने आने के बाद मुझे अपनी भूल का एहसास हुआ कि मैं अनजाने में भ्रमित था और इसी कारण ही मैंने अपनी उक्त किताब 'इस्लामिक आतंकवाद का इतिहास' में आतंकवाद को इस्लाम से जोड़ा है जिसका मुझे हार्दिक खेद है।

मैं अल्लाह से, पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) से और सभी मुस्लिम भाइयों से सार्वजनिक रूप से माफ़ी माँगता हूँ तथा अज्ञानता में लिखे व बोले शब्दों को वापस लेता हूँ। जनता से मेरी अपील है कि 'इस्लामिक आतंकवाद का इतिहास' पुस्तक में जो लिखा है उसे शून्य समझें।

स्वामी लक्ष्मीशंकराचार्य
e-mail : laxmishankaracharya@yahoo.in
मोबाइल नं० : 09415594441-09935037145

ब्रहस्पतिवार,
10/7/2008

1. सल्ल० : इसका पूर्ण रूप है, 'सल-लल-लाहु अलैहि वसल्लम' जिसका अर्थ है, 'अल्लाह उन पर रहमत और सलामती की बारिश करे!' हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का नाम लिखते, लेते या सुनते हैं तो आदर और प्रेम के लिए दुआ के ये शब्द बढ़ा देते हैं।
2. 'जीवनी हज़रत मुहम्मद' लेखक मुहम्मद इनायतुल्लाह सुब्हानी अनुवादक नसीम ग़ाज़ी फ़लाही, प्रकाशक मर्कज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, अबुल-फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिआ नगर, नई दिल्ली-25

एक सुनियोजित साज़िश

शुरुआत कुछ इस तरह हुई कि भारत सहित दुनिया में यदि कहीं विस्फोट हुआ या किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों की हत्या हुई और उस घटना में संयोगवश कोई मुसलमान शामिल हुआ तो उसे इस्लामिक आतंकवाद कहा गया।

थोड़े ही समय में मीडिया सहित कुछ ताक़तों ने अपने-अपने निजी फ़ायदों के लिए इसे सुनियोजित तरीक़े से इस्लामिक आतंकवाद की परिभाषा में बदल दिया। सुनियोजित साज़िश के अन्तर्गत किए गए इस प्रचार का परिणाम यह हुआ कि आज कहीं भी विस्फोट हो जाए तो उसे तुरन्त इस्लामी आतंकवादी घटना मानकर ही चला जाता है।

इसी माहौल में पूरी दुनिया में जनता के बीच मीडिया के माध्यम से और पश्चिमी दुनिया सहित कई अलग-अलग देशों में, अलग-अलग भाषाओं में सैकड़ों किताबें लिख-लिखकर यह प्रचारित किया गया कि दुनिया में आतंकवाद की जड़ इस्लाम है।

इस दुष्प्रचार में यह प्रमाणित किया गया कि क़ुरआन में अल्लाह की आयतें मुसलमानों को आदेश देती हैं कि वे अन्य धर्म को माननेवाले काफ़िरों से लड़ें, उनकी बेरहमी के साथ हत्या करें या उन्हें आतंकित कर ज़बरदस्ती मुसलमान बनाएँ, उनके पूजास्थलों को नष्ट करेंह्न यह जिहाद है और इस जिहाद करनेवाले को अल्लाह जन्नत देगा। इस तरह योजनाबद्ध तरीक़े से इस्लाम को बदनाम करने के लिए उसे निर्दोषों की हत्या करानेवाला आतंकवादी धर्म घोषित कर दिया गया और जिहाद का मतलब आतंकवाद बताया गया।

सच्चाई क्या है? यह जानने के लिए हम वही तरीक़ा अपनाएंगे जिस तरीक़े से हमें सच्चाई का ज्ञान हुआ था। मेरे द्वारा शुद्ध मन से किए गए इस पवित्र प्रयास में यदि अनजाने में कोई ग़लती हो गई हो तो उसके लिए पाठक मुझे क्षमा करेंगे।

इस्लाम के बारे में कुछ भी प्रमाणित करने के लिए यहां हम तीन कसौटियों को लेंगेह्न

1. क़ुरआन मजीद में अल्लाह के आदेश

2. पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी

3. हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के कथन यानी हदीस

इन तीनों कसौटियों से अब हम देखते हैं कि :

- क्या वास्तव में इस्लाम निर्दोषों से लड़ने और उनकी हत्या करने व हिंसा फैलाने का आदेश देता है?
- क्या वास्तव में इस्लाम दूसरों के पूजाघरों को तोड़ने का आदेश देता है?
- क्या वास्तव में इस्लाम लोगों को ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने का आदेश देता है?
- क्या वास्तव में हमला करने, निर्दोषों की हत्या करने और आतंक फैलाने का नाम ही जिहाद है?
- क्या वास्तव में इस्लाम एक आतंकवादी धर्म है?

सर्वप्रथम यह बताना आवश्यक है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के अन्तिम पैग़म्बर हैं। अल्लाह ने आसमान से क़ुरआन मुहम्मद (सल्ल०) पर ही उतारा। अल्लाह का पैग़म्बर होने के बाद से जीवन-पर्यन्त 23 सालों तक आप (सल्ल०) ने जो किया, वह क़ुरआन के अनुसार ही किया।

दूसरों शब्दों में, हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के जीवन के ये 23 साल क़ुरआन या इस्लाम का व्यावहारिक रूप हैं। अत: .क़ुरआन या इस्लाम को जानने का सबसे महत्त्वपूर्ण और आसान तरीक़ा हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की पवित्र जीवनी है, यह मेरा स्वयं का भी अनुभव है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी और क़ुरआन मजीद पढ़कर पाठक स्वयं निर्णय कर सकते हैं कि इस्लाम आतंक है या आदर्श!

हज़रत मुहम्मद (सल्ल0) की संक्षिप्त जीवनी

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की पवित्र जीवनी लिखनेवाले विद्वान लिखते हैं किह्न पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) का जन्म मक्का के क़ुरैश क़बीले के सरदार अब्दुल-मुत्तलिब के बेटे अब्दुल्लाह के घर सन् 570 ई० में हुआ। मुहम्मद (सल्ल०) के जन्म से पहले ही उनके पिता अब्दुल्लाह का निधन हो गया था। मुहम्मद (सल्ल०) जब 6 साल के हुए तो माँ आमिना भी चल बसीं। 8 साल की उम्र में दादा अब्दुल-मुत्तलिब का भी देहान्त हो गया तो चाचा अबू-तालिब के संरक्षण में आप (सल्ल०) पले-बढ़े।

25 वर्ष की उम्र में मुहम्मद (सल्ल०) का विवाह ख़दीजा से हुआ। ख़दीजा मक्का के एक बहुत ही समृद्धशाली और सम्मानित परिवार की विधवा महिला थीं।

उस समय मक्का के लोग काबा में स्थित 360 मूर्तियों की उपासना करते थे। मक्का में मूर्ति-पूजा का प्रचलन शाम (सीरिया) से आया। वहाँ सबसे पहले जो मूर्ति स्थापित की गई वह 'हुबल' नाम के देवता की थी, जो सीरिया से लाई गई थी। इसके बाद 'इसाफ' और 'नाइला' की मूर्तियाँ ज़मज़म नामक कुएँ पर स्थापित की गईं। फिर हर क़बीले ने अपनी-अपनी अलग-अलग मूर्तियाँ स्थापित कीं। जैसे क़ुरैश क़बीले ने 'उज़्ज़ा' की, ताइफ़ के क़बीले सक़ीफ़ ने 'लात' की, मदीना के औस और ख़ज़रज क़बीलों ने 'मनात' की मूर्तियाँ स्थापित कीं। ऐसे ही वद्द, सुवाअ, यग़ूस, नसर आदि प्रमुख मूर्तियाँ थीं। इनके अलावा हज़रत इबराहीम, हज़रत इस्माईल, हज़रत ईसा आदि की तस्वीरें व मूर्तियाँ ख़ाना काबा में मौजूद थीं।

ऐसी परिस्थितियों में 40 वर्ष की उम्र में मुहम्मद (सल्ल०) को प्रथम बार रमज़ान के महीने में मक्का से 6 मील की दूरी पर 'ग़ारे-हिरा' नामक गुफा में

एक फ़रिश्ते जिबरील से अल्लाह का सन्देश प्राप्त हुआ। इसके बाद अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को समय-समय पर अल्लाह के आदेश मिलते रहे। अल्लाह के यही आदेश, क़ुरआन है।

मुहम्मद (सल्ल०) लोगों को अल्लाह का पैग़ाम देने लगे कि ''अल्लाह (परमेश्वर) एक है उसका कोई शरीक नहीं। केवल वही पूजा के योग्य है। सब लोगों को उसी की इबादत करनी चाहिए। अल्लाह ने मुझे नबी (पैग़म्बर) बनाया है। मुझ पर अपनी आयतें उतारी हैं ताकि मैं लोगों को सत्य बताऊँ, सत्य की सीधी राह दिखाऊँ।'' जो लोग मुहम्मद (सल्ल०) के इस पैग़ाम पर ईमान (यानी विश्वास) लाए, वे मुस्लिम अर्थात् मुसलमान कहलाए। मुस्लिम का अर्थ है आज्ञाकारी, फ़रमांबरदार, अपने आपको ईश्वर के हवाले कर देनेवाला।

बीवी ख़दीजा (रज़ि०)[1] पैग़म्बर मुहम्मद पर विश्वास लाकर पहली मुसलमान बनीं। इसके बाद चाचा अबू-तालिब के बेटे अली (रज़ि०) और मुंह बोले बेटे ज़ैद (रज़ि०) व पैग़म्बर (सल्ल०) के गहरे दोस्त अबू-बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) ने मुसलमान बनने के लिए ''अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन-न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह'' यानी ''मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं है और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं'' कहकर इस्लाम क़बूल किया।

मक्का के अन्य लोग भी ईमान (यानी विश्वास) लाकर मुसलमान बनने लगे। कुछ समय बाद ही क़ुरैश के सरदारों को मालूम हो गया कि मुहम्मद (सल्ल०) अपने बाप-दादा के धर्म बहुदेववाद और मूर्तिपूजा के स्थान पर किसी नए धर्म का प्रचार कर रहे हैं और बाप-दादा के धर्म को समाप्त कर रहे हैं। यह जानकर मुहम्मद (सल्ल०) के अपने ही क़बीले क़ुरैश के लोग बहुत क्रोधित हो गए। मक्का के सारे बहुदेववादी काफ़िर सरदार इकट्ठे होकर मुहम्मद (सल्ल०) की शिकायत लेकर उनके चाचा अबू-तालिब के पास गए। अबू-तालिब ने मुहम्मद (सल्ल०) को बुलवाया और कहा, ''मुहम्मद, ये अपने क़ुरैश क़बीले के

1. रज़ि० : इसका पूर्ण रूप है, 'रज़ियल्लाहु अन्हा' इसके मायने हैं, 'अल्लाह उनसे राज़ी हो!' सहाबी (औरत) के साथ यह आदर और प्रेम सूचक दुआ बढ़ा देते हैं। पुरुष सहाबी के साथ 'रज़ियल्लाहु अन्हु' पढ़ते हैं।

सहाबी उस खुशक़िस्मत मुसलमान को कहते हैं जिसे पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) से मुलाक़ात का मौक़ा मिला हो।

असरदार सरदार हैं, ये चाहते हैं कि तुम यह प्रचार न करो कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं है और ये चाहते हैं कि तुम अपने बाप-दादा के धर्म पर क़ायम रहो।''

मुहम्मद (सल्ल०) ने 'ला इला-ह इल्लल्लाह' (अल्लाह के अलावा कोई पूज्य नहीं है) इस सत्य का प्रचार छोड़ने से इनकार कर दिया। क़ुरैश के सरदार क्रोधित होकर चले गए।

इसके बाद क़ुरैश के इन सरदारों ने तय किया कि अब हम मुहम्मद को हर प्रकार से कुचल देंगे। अत: वे मुहम्मद (सल्ल०) और उनके साथियों को बेरहमी के साथ तरह-तरह से सताते, अपमानित करते और उनपर पत्थर बरसाते।

इसके बावजूद मुहम्मद (सल्ल०) ने उनकी दुष्टता का जवाब सदैव सज्जनता और सद्व्यवहार से ही दिया।

मुहम्मद (सल्ल०) व आपके साथी मुसलमानों के विरोध में क़ुरैश का साथ देने के लिए अरब के और बहुत-से क़बीले थे जिन्होंने आपस में यह समझौता कर लिया था कि कोई क़बीला किसी मुसलमान को पनाह नहीं देगा। प्रत्येक क़बीले की ज़िम्मेदारी थी कि जहां कहीं मुसलमान मिल जाएं उनको ख़ूब मारें-पीटें और हर तरह से अपमानित करें, जिससे कि वे अपने बाप-दादा के धर्म की ओर लौट आने को मजबूर हो जाएं।

दिन-प्रतिदिन उनके अत्याचार बढ़ते गए। उन्होंने निर्दोष असहाय मुसलमानों को क़ैद किया, मारा-पीटा, भूखा-प्यासा रखा। मक्का की तपती रेत पर नंगा लिटाया, लोहे की गर्म छड़ों से दाग़ा और तरह-तरह के अत्याचार किए।

उदाहरण के लिए हज़रत यासिर (रज़ि०) और उनकी बीवी हज़रत सुमय्या (रज़ि०) तथा उनके पुत्र हज़रत अम्मार (रज़ि०) मक्का के ग़रीब लोग थे और इस्लाम क़बूल कर के मुसलमान बन गए थे। उनके मुसलमान बनने से नाराज़ मक्का के इस्लाम-विरोधी उन्हें सज़ा देने के लिए जब कड़ी दोपहर हो जाती तो उनके कपड़े उतार कर उन्हें तपती रेत पर लिटा देते।

हज़रत यासिर (रज़ि०) ने इन ज़ुल्मों को सहते हुए तड़प-तड़प कर जान दे दी। मुहम्मद (सल्ल०) व मुसलमानों का सबसे बड़ा विरोधी अबू-जह्ल बड़ी बेदर्दी से हज़रत सुमय्या (रज़ि०) पर ज़ुल्म करता रहता। एक दिन उन्होंने अबू-जह्ल को बद्दुआ दे दी जिससे नाराज़ होकर अबू-जह्ल ने भाला मारकर

हज़रत सुमय्या (रज़ि०) का क़त्ल कर दिया। इस तरह इस्लाम में **हज़रत सुमय्या (रज़ि०) ही सबसे पहले सत्य की रक्षा के लिए शहीद बनीं।**

क़ुरैश, हज़रत अम्मार (रज़ि०) को लोहे का कवच पहनाकर धूप में लिटा देते। तपती हुई रेत पर लिटाने के बाद मारते-मारते बेहोश कर देते।

इस्लाम क़बूल कर मुसलमान बने हज़रत बिलाल (रज़ि०), क़ुरैश सरदार उमय्या के ग़ुलाम थे। उमय्या ने यह जानकर कि बिलाल मुसलमान बन गए हैं, उनका खाना-पीना बन्द कर दिया। ठीक दोपहर में भूखे-प्यासे ही वह उन्हें बाहर पत्थर पर लिटा देता और छाती पर बहुत भारी पत्थर रखवाकर कहता, ''लो मुसलमान बनने का मज़ा चखो।''

उस समय जितने भी ग़ुलाम, मुसलमान बन गए थे उन सभी पर इसी तरह के अत्याचार हो रहे थे। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के जिगरी दोस्त हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) ने उन सबको ख़रीद-ख़रीद कर ग़ुलामी से आज़ाद कर दिया।

क़ुरैश यदि किसी को क़ुरआन की आयतें पढ़ते सुन लेते या नमाज़ पढ़ते देख लेते, तो पहले उसकी बहुत हंसी उड़ाते फिर उसे बहुत सताते। इस डर के कारण मुसलमानों को नमाज़ पढ़नी होती तो छिपकर पढ़ते और क़ुरआन पढ़ना होता तो धीमी आवाज़ में पढ़ते।

एक दिन क़ुरैश काबा में बैठे हुए थे। अब्दुल्लाह-बिन-मसऊद (रज़ि०) काबा के पास नमाज़ पढ़ने लगे, तो वहां बैठे सारे काफ़िर क़ुरैश उन पर टूट पड़े और उन्होंने अब्दुल्लाह को मारते-मारते बे-दम कर दिया।

जब मक्का में काफ़िरों के अत्याचारों के कारण मुसलमानों का जीना दूभर हो गया तो मुहम्मद (सल्ल०) ने उनसे कहा, ''हब्शा चले जाओ।''

हब्शा का बादशाह नज्जाशी ईसाई था। अल्लाह के रसूल का हुक्म पाते ही बहुत-से मुसलमान हब्शा चले गए। जब क़ुरैश को पता चला तो उन्होंने अपने दो आदमियों को दूत बनाकर हब्शा के बादशाह के पास भेजकर कहलवाया कि ''हमारे यहां के कुछ मुजरिमों ने भागकर आपके यहां शरण ली है। इन्होंने हमारे धर्म से बग़ावत की है और आपका ईसाई धर्म भी स्वीकार नहीं किया है, फिर भी आपके यहाँ रह रहे हैं। ये अपने बाप-दादा के धर्म से बग़ावत कर एक ऐसा नया धर्म लेकर चल रहे हैं, जिसे न हम जानते हैं और न आप। ये हमारे

मुजरिम हैं, इनको लेने के लिए हम आए हैं।''

बादशाह नज्जाशी ने मुसलमानों से पूछा, ''तुम लोग कौन-सा ऐसा नया धर्म लेकर चल रहे हो, जिसे हम नहीं जानते?''

इस पर मुसलमानों की ओर से हज़रत जाफ़र (रज़ि०) बोलेह्व ''हे बादशाह! पहले हम लोग असभ्य और गँवार थे। बुतों की पूजा करते थे, गन्दे काम करते थे, पड़ोसियों से व आपस में झगड़ा करते रहते थे। इस बीच अल्लाह ने हममें अपना एक रसूल (पैग़म्बर) भेजा। उसने हमें सत्य-धर्म इस्लाम की ओर बुलाया। उसने हमें अल्लाह का पैग़ाम देते हुए कहा कि हम केवल एक ईश्वर की पूजा करें, बेजान बुतों की पूजा छोड़ दें, सत्य बोलें और पड़ोसियों के साथ अच्छा व्यवहार करें, किसी के साथ अत्याचार और अन्याय न करें, व्यभिचार और गन्दे कार्यों को छोड़ दें, अनाथों और कमज़ोरों का माल न खाएं, पाक दामन औरतों पर तोहमत न लगाएं, नमाज़ पढ़ें और ख़ैरात यानी दान दें।

हमने उसके इस पैग़ाम को और उसको सच्चा जाना और हम उसपर ईमान (विश्वास) लाकर मुसलमान बन गए।''

हज़रत जाफ़र (रज़ि०) के जवाब से बादशाह नज्जाशी बहुत प्रभावित हुआ। उसने दूतों को यह कहकर वापस कर दिया कि ये लोग अब यहीं रहेंगे।

मक्का में ख़त्ताब के पुत्र उमर बड़े ही क्रोधी किन्तु बड़े बहादुर एवं साहसी व्यक्ति थे। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने अल्लाह से प्रार्थना की कि यदि उमर ईमान लाकर मुसलमान बन जाएं तो इस्लाम को बड़ी मदद मिले। लेकिन उमर मुसलमानों के प्रति बड़े ही निर्दयी थे। जब उन्हें यह मालूम हुआ कि नज्जाशी ने मुसलमानों को अपने यहाँ शरण दे दी है तो वे बहुत क्रोधित हुए। उमर ने सोचा कि सारे फ़साद की जड़ मुहम्मद ही हैं, अब मैं उन्हें ही मारकर फ़साद की यह जड़ समाप्त कर दूंगा।

ऐसा सोचकर उमर तलवार उठाकर चल दिए। रास्ते में उनकी भेंट नुऐम-बिन-अब्दुल्लाह से हो गई जो पहले ही इस्लाम क़बूल कर चुके थे, लेकिन उमर को यह मालूम नहीं था। बातचीत में जब नुऐम को पता चला कि उमर अल्लाह के रसूल (सल्ल०) का क़त्ल करने जा रहे हैं तो उन्होंने उमर के इरादे का रुख़ बदलने के लिए कहा, ''तुम्हारे बहन-बहनोई मुसलमान हो गए हैं, पहले उनसे तो निपटो।''

यह सुनते ही कि उनकी बहन और बहनोई मुहम्मद का धर्म इस्लाम क़बूल कर मुसलमान बन चुके हैं, उमर गुस्से से पागल हो गए और सीधे बहन के घर जा पहुंचे।

भीतर से कुछ पढ़ने की आवाज़ आ रही थी। उस समय ख़ब्बाब (रज़ि०) क़ुरआन पढ़ रहे थे। उमर की आवाज़ सुनते ही वे डर के मारे अन्दर छिप गए। क़ुरआन के जिन पन्नों को वे पढ़ रहे थे, उमर की बहन फ़ातिमा (रज़ि०) ने उन्हें छिपा दिया, फिर बहनोई सईद (रज़ि०) ने दरवाज़ा खोला।

उमर ने यह कहते हुए कि ''क्या तुम लोग सोचते हो कि तुम्हारे मुसलमान बनने की मुझे ख़बर नहीं है?'' यह कहते हुए उमर ने बहन-बहनोई को मारना-पीटना शुरू कर दिया और इतना मारा कि बहन का सिर फट गया। किन्तु इतनी मार खाने के बाद भी बहन ने इस्लाम छोड़ने से इनकार कर दिया।

बहन के इस दृढ़ संकल्प ने उमर के इरादे को हिलाकर रख दिया। उन्होंने अपनी बहन से क़ुरआन के पन्ने दिखाने को कहा। क़ुरआन के उन पन्नों को पढ़ने के बाद उमर का भी मन बदल गया। अब वे मुसलमान बनने का इरादा कर मुहम्मद (सल्ल०) से मिलने के लिए चल दिए।

उमर ने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से विनम्रतापूर्वक कहा, ''मैं इस्लाम स्वीकार करने आया हूँ। मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के अलावा कोई पूज्य नहीं है और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं। अब मैं मुसलमान हूं।''

इस तरह मुसलमानों की संख्या निरन्तर बढ़ रही थी। इसे रोकने के लिए क़ुरैश ने आपस में एक समझौता किया। इस समझौते के अनुसार क़ुरैश के सरदार मुहम्मद (सल्ल०) के परिवार के प्रमुख अबू-तालिब के पास गए और उनसे कहा, ''आप मुहम्मद को हमारे हवाले कर दें। हम उसका क़त्ल कर देंगे और इस ख़ून के बदले हम आपको बहुत-सा धन देंगे। यदि आप ऐसा नहीं करेंगे तो हम सब घेराव करके आप लोगों को नज़रबन्द रखेंगे। न आप लोगों से कभी कुछ ख़रीदेंगे, न बेचेंगे और न ही किसी प्रकार का लेन-देन करेंगे। आप सब भूख से तड़प-तड़प कर मर जाओगे।''

अबू-तालिब ने मुहम्मद (सल्ल०) को उनके हवाले करने से इनकार कर दिया, जिसके कारण मुहम्मद (सल्ल०) अपने चाचा अबू-तालिब और समूचे

ख़ानदान के साथ एक घाटी में नज़रबन्द कर दिए गए। भूख के कारण उन्हें पत्ते तक खाने पड़े। लम्बे समय के बाद मुसलमानों के कुछ हमदर्दों के प्रयास से यह नज़रबन्दी समाप्त हुई।

इसके कुछ दिनों के बाद चाचा अबू-तालिब चल बसे। थोड़े ही दिनों के बाद बीवी ख़दीजा (रज़ि०) भी नहीं रहीं।

मक्का के काफ़िरों ने बहुत कोशिश की कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह का पैग़ाम पहुंचाना छोड़ दें। चाचा अबू-तालिब की मौत के बाद उन काफ़िरों के हौसले और बढ़ गए। एक दिन मुहम्मद (सल्ल०) काबा में नमाज़ पढ़ रहे थे। किसी ने ओझड़ी (गन्दगी) लाकर उनके ऊपर डाल दी, लेकिन उन्होंने न कुछ बुरा-भला कहा और न कोई बद्दुआ दी।

इसी प्रकार एक बार मुहम्मद (सल्ल०) कहीं जा रहे थे, रास्ते में किसी ने उनके सिर पर मिट्टी डाल दी। वे घर वापस लौट आए। पिता पर लगातार हो रहे अत्याचारों को सोचकर बेटी फ़ातिमा उनका सिर धोते हुए रोने लगीं। मुहम्मद (सल्ल०) ने बेटी को तसल्ली देते हुए कहा, ''बेटी, रो मत! अल्लाह तुम्हारे बाप की मदद करेगा।''

मुहम्मद (सल्ल०) जब क़ुरैश के ज़ुल्मों से तंग आ गए और उनकी ज़्यादतियां असहनीय हो गईं, तो वे ताइफ़[1] गए, लेकिन यहां किसी ने उनको ठहराना तक पसन्द नहीं किया। अल्लाह के पैग़ाम को झूठा कहकर मुहम्मद (सल्ल०) को अल्लाह का रसूल मानने से इनकार कर दिया। यहाँ तक कि सक़ीफ़ क़बीले के एक सरदार ने ताइफ़ के ग़ुण्डों को मुहम्मद (सल्ल०) के पीछे लगा दिया, जिन्होंने पत्थर मार-मारकर उनको बुरी तरह ज़ख़्मी कर दिया। किसी तरह उन्होंने अंगूर के एक बाग़ में पहुँचकर अपनी जान बचाई।

मक्का में क़ुरैश को जब ताइफ़ का सारा हाल मालूम हुआ तो वे बड़े ख़ुश हुए और मुहम्मद (सल्ल०) की ख़ूब हंसी उड़ाई। उन्होंने आपस में तय किया कि मुहम्मद अगर लौटकर मक्का आए तो उनका क़त्ल कर देंगे।

मुहम्मद (सल्ल०) ताइफ़ से मक्का के लिए रवाना हुए। हिरा नामक स्थान

1. ताइफ़ एक नख़लिस्तान• था जहाँ मक्का के अमीर क़ुरैश सरदारों के अंगूर के बाग़, खेती की ज़मीनें और महल थे जिनकी देखभाल वहाँ का सक़ीफ़ नाम का क़बीला करता था।

• रेगिस्तान के बीच उपजाऊ भाग को नख़लिस्तान कहते हैं।

पर पहुंचे तो वहां पर क़ुरैश के कुछ लोग मिल गए। ये लोग मुहम्मद (सल्ल०) के हमदर्द थे। उनसे मालूम हुआ कि क़ुरैश उनका क़त्ल करने को तैयार बैठे हैं।

अल्लाह के रसूल अपनी बीवी ख़दीजा के एक रिश्तेदार अदी के बेटे मुतइम की पनाह में मक्का में दाख़िल हुए। चूंकि मुतइम मुहम्मद (सल्ल०) को पनाह दे चुके थे, इसलिए कोई कुछ न बोला लेकिन मुहम्मद (सल्ल०) जब काबा पहुंचे, तो अबू-जह्ल ने उनकी ख़ूब हंसी उड़ाई।

मुहम्मद (सल्ल०) सत्य-प्रचार का काम करते रहे। उन्होंने अरब के अन्य क़बीलों को भी इस्लाम की ओर बुलाना शुरू कर दिया। इसके परिणामस्वरूप मदीना में इस्लाम फैलने लगा।

मदीना वासियों ने अल्लाह के रसूल की बातों पर ईमान (यानी विश्वास) लाने के साथ उनकी सुरक्षा करने की भी प्रतिज्ञा की। मदीनावालों ने आपस में तय किया कि इस बार जब हज करने मक्का जाएंगे तो अपने प्यारे रसूल (सल्ल०) को मदीना आने का निमन्त्रण देंगे।

जब हज का समय आया तो मदीना से मुसलमानों और ग़ैर-मुसलमानों का एक बड़ा क़ाफ़िला हज करने के लिए मक्का के लिए चला। मदीना के मुसलमानों की मुहम्मद (सल्ल०) से काबा में मुलाक़ात हुई। इनमें से 75 लोगों ने जिनमें दो औरतें भी थीं पहले से तय की हुई जगह पर रात में अल्लाह के रसूल से मुलाक़ात की। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से बातचीत करने के बाद मदीनावालों ने सत्य की और सत्य को बतानेवाले अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की रक्षा करने की बैअत (यानी प्रतिज्ञा) की।

रात में हुई इस प्रतिज्ञा की पूरी ख़बर क़ुरैश को मिल गई थी। सुबह क़ुरैश को जब पता चला कि मदीनावाले निकल गए तो उन्होंने उनका पीछा किया परन्तु वे पकड़ में न आए। लेकिन उनमें से एक व्यक्ति सअद (रज़ि०) पकड़ लिए गए। क़ुरैश उन्हें मारते-पीटते बाल पकड़ कर घसीटते हुए मक्का लाए।

मक्का में मुसलमानों के लिए क़ुरैश के अत्याचार असहनीय हो चुके थे। इसलिए मुहम्मद (सल्ल०) ने मुसलमानों को मदीना चले जाने के लिए कहा और हिदायत दी कि एक-एक, दो-दो करके निकलो ताकि क़ुरैश तुम्हारा इरादा

भांप न सकें। मुसलमान चोरी-छिपे मदीना की ओर जाने लगे। अधिकांश मुसलमान निकल गए लेकिन कुछ क़ुरैश की पकड़ में आ गए और क़ैद कर लिए गए। उन्हें बड़ी बेरहमी से सताया गया ताकि वे मुहम्मद (सल्ल०) के बताए धर्म को छोड़कर अपने बाप-दादा के धर्म में लौट आएं।

अब मक्का में इन बन्दी मुसलमानों के अलावा अल्लाह के रसूल (सल्ल०), अबू-बक्र (रज़ि०), और अली (रज़ि०) ही बचे थे, जिनपर काफ़िर क़ुरैश घात लगाए बैठे थे।

मदीना के लिए मुसलमानों की हिजरत से यह हुआ कि मदीना में इस्लाम का प्रचार-प्रसार शुरू हो गया। लोग तेज़ी से मुसलमान बनने लगे।

मुसलमानों का ज़ोर बढ़ने लगा। मदीना में मुसलमानों की बढ़ती ताक़त देखकर क़ुरैश चिन्तित हुए। अत: एक दिन क़ुरैश अपने मंत्रणागृह 'दारुन्नदवा' में जमा हुए। यहाँ सब ऐसी तरकीब सोचने लगे जिससे मुहम्मद (सल्ल०) का ख़ातिमा किया जा सके और इस्लाम का प्रवाह रुक जाए। अबू-जह्ल के प्रस्ताव पर सब की राय से तय हुआ कि प्रत्येक क़बीले से एक-एक व्यक्ति को लेकर एक साथ मुहम्मद पर हमला बोलकर उनकी हत्या कर दी जाए। इससे मुहम्मद के परिवारवाले तमाम सम्मिलित क़बीलों का मुक़ाबला नहीं कर पाएंगे और समझौता करने को मजबूर हो जाएंगे।

फिर पहले से तय की हुई रात को काफ़िरों ने हत्या के लिए मुहम्मद (सल्ल०) के घर को हर तरफ़ से घेर लिया जिससे कि मुहम्मद (सल्ल०) के बाहर निकलते ही उनकी हत्या कर दें। लेकिन अल्लाह ने इस ख़तरे से मुहम्मद (सल्ल०) को सावधान कर दिया। उन्होंने अपने चचेरे भाई अली (रज़ि०) से जो उनके साथ रहते थे, कहाह्न

> ''अली! मुझको अल्लाह से हिजरत का आदेश मिल चुका है। दुश्मन आज हमारे घर को घेरे हुए हैं और मेरी हत्या पर आतुर हैं। मैं मदीना जा रहा हूँ। तुम मेरे बिस्तर पर मेरी चादर ओढ़कर सो जाओ, अल्लाह तुम्हारी रक्षा करेगा। सुबह जाकर सबकी अमानतें वापस कर देना। बाद में तुम भी मदीना चले आना।''

क़ुरैश हालाँकि पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की जान के दुश्मन थे, परन्तु आप (सल्ल०) ही के पास वे अपनी अमानतें रखते थे। उस समय भी आपके पास लोगों की बहुत-सी अमानतें थीं। यही वजह थी कि आप (सल्ल०) अली (रज़ि०) को अपने साथ न ले गए बल्कि लोगों की अमानतें वापस करने के लिए उन्हें मक्का ही में छोड़ गए।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) अपने प्रिय साथी अबू-बक्र (रज़ि०) के साथ मक्का से मदीना के लिए निकले। मदीना, मक्का से उत्तर दिशा की ओर है, लेकिन दुश्मनों से बचने के लिए मुहम्मद (सल्ल०) मक्का से दक्षिण दिशा में यमन के रास्ते पर सौर की गुफा में पहुंचे, क्योंकि उन्हें विश्वास था कि दुश्मन उनकी तलाश में उत्तर की ओर ही जाएंगे। तीन दिन उसी गुफा में ठहरे रहे। जब मुहम्मद (सल्ल०) व हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) की तलाश बन्द हो गई तब आप (सल्ल०) व अबू-बक्र (रज़ि०) गुफा से निकलकर मदीना की ओर चल दिए।

कई दिन-रात चलने के बाद 24 सितम्बर सन् 622 ई0 को मदीना से पहले क़ुबा नाम की एक बस्ती में पहुँचे जहाँ मुसलमानों के कई परिवार आबाद थे। यहाँ मुहम्मद (सल्ल०) ने एक मस्जिद की बुनियाद डाली, जो 'क़ुबा मस्जिद' के नाम से प्रसिद्ध है। यहीं पर अली (रज़ि०) की मुहम्मद (सल्ल०) से मुलाक़ात हो गई। कुछ दिन यहाँ ठहरने के बाद पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) मदीना पहुंचे। मदीना पहुंचने पर उनका सब ओर भव्य हार्दिक स्वागत हुआ।

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) के मदीना पहुंचने के बाद वहाँ एकेश्वरवादी सत्य-धर्म इस्लाम बड़ी तेज़ी से बढ़ने लगा। हर ओर 'ला इला-ह इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' यानी 'अल्लाह के अलावा कोई पूज्य नहीं और मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं' की गूंज सुनाई देने लगी।

काफ़िर क़ुरैश, मुनाफ़िक़ों[1] (यानी कपटाचारियों) की मदद से मदीना की ख़बर लेते रहते। सत्य-धर्म इस्लाम का प्रवाह रोकने के लिए अब वे मदीना पर हमला करने की योजनाएँ बनाने लगे।

---

1. मुनाफ़िक़ (Hypocrite)ह्व कपटाचारी, कपटी, छली, निफ़ाक़ रखनेवाला। ऐसा व्यक्ति जो अपने को मुसलमान कहता हो किन्तु इस्लाम से उसका सच्चा सम्बन्ध न हो। उसने इस्लाम और मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाने के लिए इस्लाम क़बूल किया हो।

क़ुरैश लगातार कई सालों से मुसलमानों पर हर तरह के अत्याचार करने के साथ-साथ उन्हें नष्ट करने पर उतारू थे, यहाँ तक कि मुहम्मद (सल्ल०) पर विश्वास लानेवालों (यानी मुसलमानों) को अपना वतन छोड़ना पड़ा, अपनी दौलत, जायदाद छोड़नी पड़ी। बहरहाल मुसलमान सब्र का दामन थामे ही रहे। लेकिन अत्याचारियों ने मदीना में भी उनका पीछा न छोड़ा और एक बड़ी सेना के साथ मुसलमानों पर हमला कर दिया।

जब पानी सिर से ऊपर हो गया तब अल्लाह ने भी मुसलमानों को लड़ने की इजाज़त दे दी। अल्लाह का हुक्म आ पहुंचा

> ''जिन मुसलमानों से (ख़ामख़ाह) लड़ाई की जाती है, उनको इजाज़त है (कि वे भी लड़ें), क्योंकि उनपर ज़ुल्म हो रहा है और ख़ुदा (उनकी मदद करेगा, वह) यक़ीनन उनकी मदद पर क़ुदरत रखता है।'' (क़ुरआन, सूरा-22, आयत-39)

असत्य के लिए लड़नेवाले अत्याचारियों से युद्ध करने का आदेश अल्लाह की ओर से आ चुका था। मुसलमानों को भी सत्य-धर्म इस्लाम की रक्षा के लिए तलवार उठाने की इजाज़त मिल चुकी थी। अब जिहाद (असत्य और आतंकवाद के विरोध के लिए प्रयास अर्थात् धर्मयुद्ध) शुरू हो गया। इस्लाम के दुश्मनों ने कई बार मुसलमानों के शहर मदीना पर चढ़ाई की ताकि वे पैग़म्बर और पैग़म्बर के अनुयाइयों का सफ़ाया कर सकें, मगर वे अपने कुप्रयासों में सफल न हो सके।

सत्य की स्थापना के लिए और अन्याय, अत्याचार तथा आतंक की समाप्ति के लिए किए गए जिहाद (यानी धर्मरक्षा व आत्मरक्षा के लिए युद्ध) में अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की विजय होती रही। मक्का और आस-पास के काफ़िर मुश्रिक औंधे मुंह गिरे।

इसके बाद पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) दस हज़ार मुसलमानों की सेना के साथ मक्का में असत्य व आतंकवाद की जड़ को समाप्त करने के लिए चले। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की सफलताओं और मुसलमानों की अपार शक्ति को देख मक्का के काफ़िरों ने हथियार डाल दिए। बिना किसी ख़ून-ख़राबे के मक्का फ़तह कर लिया गया। इस तरह सत्य और शान्ति की जीत तथा असत्य और आतंकवाद की हार हुई।

मक्का में, उसी मक्का में जहाँ कल अन्याय और अपमान था, आज पैग़म्बर और मुसलमानों का स्वागत हो रहा था। उदारता और दयालुता की मूर्ति बने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने उन सभी लोगों को माफ़ कर दिया, जिन्होंने आप (सल्ल०) और मुसलमानों पर बेदर्दी से ज़ुल्म किया तथा अपना वतन छोड़ने को मजबूर किया था। आज वे ही मक्कावाले अल्लाह के रसूल के सामने ख़ुशी से कह रहे थे :

''ला इला-ह इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह''

और झुंड के झुंड प्रतिज्ञा कर रहे थे

''अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन-न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह'' (मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के अलावा कोई पूज्य नहीं है और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं।)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की पवित्र जीवनी पढ़ने के बाद मैंने पाया कि पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) ने एकेश्वरवाद के सत्य को स्थापित करने के लिए अपार कष्ट झेले।

मक्का के काफ़िर सत्य-धर्म की राह में रोड़ा डालने के लिए मुहम्मद (सल्ल०) को तथा उनके बताए सत्य-मार्ग पर चलनेवाले मुसलमानों को लगातार तेरह सालों तक हर तरह से प्रताड़ित और अपमानित करते रहे। इस घोर अत्याचार के बाद भी मुहम्मद (सल्ल०) ने धैर्य बनाए रखा। यहाँ तक कि उनको अपना वतन मक्का छोड़कर मदीना जाना पड़ा। लेकिन मक्का के मुश्रिक क़ुरैश ने मुहम्मद (सल्ल०) और मुसलमानों का पीछा यहाँ भी नहीं छोड़ा। जब पानी सिर से ऊपर हो गया तो अपनी और मुसलमानों की तथा सत्य की रक्षा के लिए मजबूर होकर मुहम्मद (सल्ल०) को लड़ना पड़ा। इस तरह मुहम्मद (सल्ल०) पर और मुसलमानों पर लड़ाई थोपी गई।

इन्हीं परिस्थितियों में सत्य की रक्षा के लिए जिहाद (यानी आत्मरक्षा और धर्मरक्षा के लिए धर्मयुद्ध) की आयतें और अन्यायी तथा अत्याचारी काफ़िरों व मुश्रिकों को दण्ड देनेवाली आयतें अल्लाह की ओर से मुहम्मद (सल्ल०) पर आसमान से उतरीं।

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) द्वारा लड़ी गई लड़ाइयाँ आक्रमण के लिए न होकर, आक्रमण व आतंकवाद से बचाव के लिए थीं, क्योंकि अत्याचारियों के साथ ऐसा किए बिना शान्ति की स्थापना नहीं हो सकती थी।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने सत्य तथा शान्ति के लिए अन्तिम सीमा तक धैर्य रखा और धैर्य की अन्तिम सीमा से युद्ध की शुरुआत होती है। इस प्रकार का युद्ध ही धर्मयुद्ध (यानी जिहाद) कहलाता है।

विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि क़ुरैश जिन्होंने मुहम्मद (सल्ल०) व मुसलमानों पर भयानक अत्याचार किए थे, फ़त्ह मक्का (यानी मक्का विजय) के दिन वे थर-थर काँप रहे थे कि आज क्या होगा? लेकिन मुहम्मद (सल्ल०) ने उन्हें माफ़ कर गले लगा लिया।

अल्लाह ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को किसी एक देश या किसी एक समुदाय के लिए पैग़म्बर बनाकर नहीं भेजा बल्कि सम्पूर्ण संसार के लिए, और सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए पैग़म्बर बनाकर भेजा। क़ुरआन की सूरा-7, आयत-158 में है :

''(ऐ मुहम्मद!) कह दो कि लोगो! मैं तुम सब की तरफ़ ख़ुदा का भेजा हुआ (यानी उसका रसूल) हूं। (वह) जो आसमानों और ज़मीन का बादशाह है, उसके सिवा कोई माबूद [यानी पूज्य] नहीं। वही ज़िन्दगी बख़्शता है और वही मौत देता है, तो ख़ुदा पर और उसके रसूल पैग़म्बर उम्मी पर, जो ख़ुदा पर और उसके तमाम कलाम पर ईमान रखते हैं, ईमान लाओ और उनकी पैरवी करो, ताकि हिदायत पाओ।''

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की इस पवित्र जीवनी से सिद्ध होता है कि इस्लाम का अन्तिम उद्देश्य दुनिया में सत्य और शान्ति की स्थापना और आतंकवाद का विरोध है।

अतः इस्लाम को हिंसा और आतंक से जोड़ना सबसे बड़ा असत्य है। यदि कोई ऐसी घटना होती है तो उसको इस्लाम से या सम्पूर्ण मुस्लिम समुदाय से जोड़ा नहीं जा सकता।

इस्लाम और आतंक

अब इस्लाम को विस्तार से जानने के लिए इस्लाम की बुनियाद क़ुरआन की ओर चलते हैं।

इस्लाम, आतंक है या आदर्श? यह जानने के लिए मैं क़ुरआन मजीद की कुछ आयतें दे रहा हूं जिन्हें मैंने मौलाना फ़तह मुहम्मद ख़ाँ जालन्धरी द्वारा अनुवादित और महमूद एण्ड कम्पनी मरोल पाइप लाइन, मुम्बई- 59 से प्रकाशित क़ुरआन मजीद से लिया है।

पाठक इस बात को ध्यान में रखें कि क़ुरआन मजीद के अनुवाद में यदा-कदा [ ] (बड़े ब्रेकिट) शब्दों की व्याख्या के लिए लगाए गए हैं। ये ब्रेकिट लेखक की ओर से है।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि क़ुरआन मजीद का अनुवाद करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना पड़ता है कि किसी भी आयत का भावार्थ ज़रा भी बदलने न पाए, क्योंकि किसी भी क़ीमत पर यह बदला नहीं जा सकता। इसी लिए अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग अनुवादकों द्वारा क़ुरआन मजीद के किए अनुवाद का भाव एक ही रहता है। ग़ैर-मुस्लिम भाई यदि इस अनुवाद के कठिन शब्दों को न समझ पाएं तो वे मधुर सन्देश संगम E-20, अबुल-फ़ज़्ल इंक्लेव, जामिआ नगर, नई दिल्ली-25 द्वारा प्रकाशित और मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ द्वारा अनुवादित पवित्र क़ुरआन का भी सहारा ले सकते हैं।

क़ुरआन की शुरुआत 'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' से होती है, जिसका अर्थ है- 'शुरू अल्लाह का नाम लेकर, जो बड़ा कृपालु, अत्यन्त दयालु है।'

ध्यान दें। ऐसा अल्लाह, जो बड़ा कृपालु और अत्यन्त दयालु है वह ऐसे फ़रमान कैसे जारी कर सकता है, जो किसी को कष्ट पहुंचाने वाले हों अथवा हिंसा या आतंक फैलानेवाले हों? अल्लाह की इसी कृपालुता और दयालुता का पूर्ण प्रभाव अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) के व्यावहारिक जीवन में देखने को मिलता है।

क़ुरआन की आयतों से व पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी से पता चलता है कि मुसलमानों को उन काफ़िरों से लड़ने का आदेश दिया गया जो आक्रमणकारी थे, अत्याचारी थे। यह लड़ाई अपने बचाव के लिए थी। देखें क़ुरआन मजीद में अल्लाह के आदेश :

''और (ऐ मुहम्मद! उस वक़्त को याद करो) जब काफ़िर लोग तुम्हारे बारे में चाल चल रहे थे कि तुमको क़ैद कर दें या जान से मार डालें या (वतन से) निकाल दें तो (इधर से) वे चाल चल रहे थे और (उधर) ख़ुदा चाल चल रहा था और ख़ुदा सबसे बेहतर चाल चलनेवाला है।'' (क़ुरआन, सूरा-8, आयत-30)

''ये वे लोग हैं कि अपने घरों से ना-हक़ निकाल दिए गए, (उन्होंने कुछ क़ुसूर नहीं किया)। हां, ये कहते हैं कि हमारा परवरदिगार ख़ुदा है और अगर ख़ुदा लोगों को एक-दूसरे से न हटाता रहता तो (राहिबों के) पूजा-घर और (ईसाइयों के) गिरजे और (यहूदियों की) और (मुसलमानों की) मस्जिदें, जिनमें ख़ुदा का बहुत-सा ज़िक्र किया जाता है, गिराई जा चुकी होतीं। और जो शख़्स ख़ुदा की मदद करता है, ख़ुदा उसकी ज़रूर मदद करता है। बेशक ख़ुदा ताक़तवाला और ग़ालिब [यानी प्रभुत्वशाली] है।''

(क़ुरआन, सूरा- 22, आयत- 40)

''ये क्या कहते हैं कि इसने क़ुरआन ख़ुद से बना लिया है? कह दो कि अगर सच्चे हो तो तुम भी ऐसी दस सूरतें बना लाओ और ख़ुदा के सिवा जिस-जिस को बुला सकते हो, बुला भी लो।''

(क़ुरआन, सूरा- 11, आयत- 13)

''(ऐ पैग़म्बर!) काफ़िरों का शहरों में [शानो-शौकत के साथ] चलना-फिरना तुम्हें धोखा न दे।'' (क़ुरआन, सूरा- 3, आयत- 196)

''जिन मुसलमानों से (ख़ामख़ाह) लड़ाई की जाती है, उनको इजाज़त है (कि वे भी लड़ें), क्योंकि उनपर ज़ुल्म हो रहा है और ख़ुदा (उन की मदद करेगा, वह) यक़ीनन उनकी मदद पर क़ुदरत रखता है।''

(क़ुरआन, सूरा- 22, आयत- 39)

''और उनको [यानी काफ़िर क़ुरैश को] जहाँ पाओ, क़त्ल कर दो और जहाँ से उन्होंने तुमको निकाला है (यानी मक्का से) वहाँ से तुम भी उनको निकाल दो।'' (क़ुरआन, सूरा- 2, आयत- 191)

''जो लोग ख़ुदा और उसके रसूल से लड़ाई करें और मुल्क में फ़साद करने को दौड़ते फिरें, उनकी यह सज़ा है कि क़त्ल कर दिए जाएं या सूली चढ़ा दिए जाएं या उनके एक-एक तरफ़ के हाथ और एक-एक तरफ़ के पांव काट दिए जाएं। यह तो दुनिया में उनकी रुसवाई है और आख़िरत [यानी क़ियामत के दिन] में उनके लिए बड़ा (भारी) अज़ाब (तैयार) है।

हाँ, जिन लोगों ने इससे पहले कि तुम्हारे क़ाबू आ जाएं, तौबा कर ली, तो जान रखो कि ख़ुदा बख़्शनेवाला, मेहरबान है।''

(क़ुरआन, सूरा- 5, आयत- 33, 34)

इस्लाम के बारे में झूठा प्रचार किया जाता है कि क़ुरआन में अल्लाह के आदेशों के कारण ही मुसलमान लोग ग़ैर-मुसलमानों का जीना हराम कर देते हैं, जबकि इस्लाम में कहीं भी निर्दोषों से लड़ने की इजाज़त नहीं है, भले ही वे काफ़िर या मुश्रिक या दुश्मन ही क्यों न हों। विशेष रूप से देखिए अल्लाह के ये आदेश :

''जिन लोगों ने तुमसे दीन [धर्म] के बारे में जंग नहीं की और न तुम को तुम्हारे घरों से निकाला, उनके साथ भलाई और इंसाफ का सुलूक करने से खुदा तुमको मना नहीं करता। खुदा तो इंसाफ़ करनेवालों को दोस्त रखता है।'' (क़ुरआन, सूरा- 60, आयत- 8)

''ख़ुदा उन्हीं लोगों के साथ तुमको दोस्ती करने से मना करता है, जिन्होंने तुम से दीन के बारे में लड़ाई की और तुमको तुम्हारे घरों से निकाला और तुम्हारे निकालने में औरों की मदद की, तो जो लोग ऐसों से दोस्ती करेंगे, वही ज़ालिम हैं।'' (क़ुरआन, सूरा- 60, आयत- 9)

इस्लाम में दुश्मन के साथ भी ज़्यादती करना मना है, देखिए :

''और जो लोग तुमसे लड़ते हैं, तुम भी ख़ुदा की राह में उनसे लड़ो,

मगर ज़्यादती [अत्याचार] न करना कि ख़ुदा ज़्यादती करनेवालों को दोस्त नहीं रखता।'' (क़ुरआन, सूरा- 2, आयत- 190)

''ये ख़ुदा की आयतें हैं, जो हम तुमको सेहत के साथ पढ़कर सुनाते हैं और अल्लाह अह्ले-आलम [अर्थात् जनता] पर ज़ुल्म नहीं करना चाहता।'' (क़ुरआन, सूरा- 3, आयत- 108)

इस्लाम का प्रथम उद्देश्य दुनिया में शान्ति की स्थापना है, लड़ाई तो अन्तिम विकल्प है और यही तो आदर्श धर्म है, जो नीचे दी गई इस आयत में दिखाई देता है :

''(ऐ पैग़म्बर!) कुफ़्फ़ार से कह दो कि अगर वे अपने फ़ेलों [कर्मों] से बाज़ आ जाएं, तो जो हो चुका, वह उन्हें माफ़ कर दिया जाएगा और अगर फिर (वही हरकतें) करने लगेंगे तो अगले लोगों का (जो) तरीक़ा जारी हो चुका है (वही उनके हक़ में बरता जाएगा)।''

(क़ुरआन, सूरा- 8, आयत- 38)

इस्लाम में दुश्मनों के साथ भी सच्चा न्याय करने का आदेश, न्याय का सर्वोच्च आदर्श प्रस्तुत करता है इसे नीचे दी गई आयत में देखिए :

''ऐ ईमानवालो ! ख़ुदा के लिए इंसाफ़ की गवाही देने के लिए खड़े हो जाया करो और लोगों की दुश्मनी तुमको इस बात पर तैयार न करे कि इंसाफ़ छोड़ दो। इंसाफ़ किया करो कि यही परहेज़गारी की बात है और ख़ुदा से डरते रहो। कुछ शक नहीं कि ख़ुदा तुम्हारे तमाम कामों से ख़बरदार है।'' (क़ुरआन, सूरा- 5, आयत- 8)

इस्लाम में किसी निर्दोष की हत्या की इजाज़त नहीं है। ऐसा करनेवाले की एक ही सज़ा है, ख़ून के बदले ख़ून। लेकिन यह सज़ा केवल क़ातिल को ही मिलनी चाहिए और इसमें ज़्यादती मना है। इसे ही तो कहते हैं सच्चा इंसाफ़। देखिए नीचे दिया गया अल्लाह का यह आदेश :

''और जिस जानदार का मारना ख़ुदा ने हराम किया है, उसे क़त्ल न करना मगर जायज़ तौर पर (यानी शरीअत के फ़तवे [आदेश] के मुताबिक़) और जो शख़्स ज़ुल्म से क़त्ल किया जाए, हमने उसके

वारिस को इख़्तियार दिया है (कि ज़ालिम क़ातिल से बदला ले) तो उसको चाहिए कि क़त्ल (के क़िसास) में ज़्यादती न करे कि वह मंसूर व फ़तहयाब है।''   (क़ुरआन, सूरा- 17, आयत- 33)

इस्लाम देश में हिंसा (फ़साद) करने की इजाज़त नहीं देता। देखिए अल्लाह का यह आदेश :

''लोगों को उनकी चीज़ें कम न दिया करो और मुल्क में फ़साद न करते फिरो।''   (क़ुरआन, सूरा- 26, आयत- 183)

ज़ालिमों को अल्लाह की चेतावनी :

''जो लोग ख़ुदा की आयतों [आदेशों] को नहीं मानते और नबियों [पैग़म्बरों] को ना-हक़ क़त्ल करते रहे हैं और जो इंसाफ़ करने का हुक्म देते हैं, उन्हें भी मार डालते हैं, उनको दु:ख देनेवाले अज़ाब की खुशख़बरी सुना दो।''   (क़ुरआन, सूरा- 3, आयत-21)

सत्य के लिए कष्ट सहनेवाले, लड़ने-मरनेवाले लोग ईश्वर की कृपा के पात्र होंगे, उसके प्रिय होंगे :

''तो उनके परवरदिगार ने उनकी दुआ क़बूल कर ली। (और फ़रमाया) कि मैं किसी अमल करनेवाले के अमल को, मर्द हो या औरत ज़ाया नहीं करता। तुम एक दूसरे की जिन्स हो, तो जो लोग मेरे लिए वतन छोड़ गए और अपने घरों से निकाले गए और सताए गए और लड़े और क़त्ल किए गए मैं उनके गुनाह दूर कर दूंगा और उनको बहिश्तों में दाख़िल करूंगा, जिनके नीचे नहरें बह रही हैं। (यह) खुदा के यहाँ से बदला है और खुदा के यहाँ अच्छा बदला है।''

(क़ुरआन, सूरा- 3, आयत- 195)

इस्लाम को बदनाम करने के लिए लिख-लिखकर प्रचारित किया गया कि इस्लाम तलवार के बल पर प्रचारित व प्रसारित मज़हब है। मक्का सहित सम्पूर्ण अरब व दुनिया के अधिकांश मुसलमान, तलवार के ज़ोर पर ही मुसलमान बनाए गए थे, इस तरह इस्लाम का प्रसार ज़ोर-ज़बरदस्ती से हुआ।

जबकि इस्लाम में किसी को ज़ोर-ज़बरदस्ती से मुसलमान बनाने की सख़्त मनाही है। देखिए क़ुरआन मजीद में अल्लाह के ये आदेश :

''और अगर तुम्हारा परवरदिगार [यानी अल्लाह] चाहता तो जितने लोग ज़मीन पर हैं, सबके सब ईमान ले आते। तो क्या तुम लोगों पर ज़बरदस्ती करना चाहते हो कि वे मोमिन [यानी मुसलमान] हो जाएं।'' (क़ुरआन, सूरा- 10, आयत- 99)

''(ऐ पैग़म्बर! इस्लाम के इन मुंकिरों [नास्तिकों] से) कह दो कि ऐ काफ़िरो! जिन (बुतों) को तुम पूजते हो, उनको मैं नहीं पूजता और जिस (खुदा) की मैं इबादत करता हूँ, उसकी तुम इबादत नहीं करते, और (मैं फिर कहता हूँ कि) जिनकी तुम पूजा करते हो, उनकी मैं पूजा करने वाला नहीं हूँ। और न तुम उसकी बन्दगी करनेवाले (मालूम होते) हो, जिसकी मैं बन्दगी करता हूँ। तुम अपने दीन [धर्म] पर, मैं अपने दीन पर।'' (क़ुरआन, सूरा- 109, आयतह्व 1-6)

''ऐ पैग़म्बर! अगर ये लोग तुमसे झगड़ने लगें, तो कहना कि मैं और मेरी पैरवी करनेवाले तो ख़ुदा के फ़रमांबरदार [अर्थात् आज्ञाकारी] हो चुके और अह्ले-किताब और अनपढ़ लोगों से कहो कि क्या तुम भी (ख़ुदा के फ़रमांबरदार बनते और) इस्लाम लाते हो? अगर ये लोग इस्लाम ले आएं तो बेशक हिदायत पा लें और अगर (तुम्हारा कहा) न मानें तो तुम्हारा काम सिर्फ़ ख़ुदा का पैग़ाम पहुँचा देना है। और ख़ुदा (अपने) बन्दों को देख रहा है।''

(क़ुरआन, सूरा- 3, आयत- 20)

''कह दो कि ऐ अह्ले-किताब! जो बात हमारे और तुम्हारे दर्मियान एक ही (मान ली गई) है, उसकी तरफ़ आओ, वह यह कि खुदा के सिवा हम किसी की इबादत [पूजा] न करें और उसके साथ किसी चीज़ को शरीक [यानी साझी] न बनाएं और हममें से कोई किसी को खुदा के सिवा अपना कारसाज़ न समझे। अगर ये लोग (इस बात को) न मानें तो (उनसे) कह दो कि तुम गवाह रहो कि हम (खुदा के) फ़रमांबरदार हैं।'' (क़ुरआन, सूरा- 3, आयत- 64)

इस्लाम में ज़ोर-ज़बरदस्ती से धर्म परिवर्तन की मनाही के साथ-साथ इससे भी आगे बढ़कर किसी भी प्रकार की ज़ोर-ज़बरदस्ती की इजाज़त नहीं है। देखिए अल्लाह का यह आदेश :

''दीने-इस्लाम [इस्लाम धर्म] में ज़बरदस्ती नहीं है।''

(क़ुरआन, सूरा- 2, आयत- 256)

जो बुरे काम करेगा और असत्य नीति अपनाएगा मरने के बाद आनेवाले जीवन में उसका फल भोगेगा।

''हाँ, जो बुरे काम करे और उसके गुनाह (हर तरफ़ से) उसको घेर लें तो ऐसे लोग दोज़ख़ (में जाने) वाले हैं। (और) वे हमेशा उसमें (जलते) रहेंगे।'' (क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 81)

निष्कर्ष **- पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी व क़ुरआन मजीद की इन आयतों को देखने के बाद स्पष्ट है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की करनी और क़ुरआन की कथनी में कहीं भी आतंकवाद नहीं है।**

इससे सिद्ध होता है कि इस्लाम की अधूरी जानकारी रखनेवाले ही अज्ञानता के कारण इस्लाम को आतंकवाद से जोड़ते हैं।

क़ुरआन की वे चौबीस आयतें

कुछ लोग क़ुरआन की 24 आयतों वाला एक पैम्फ़लेट कई सालों से देश की जनता के बीच बांट रहे हैं जो भारत की लगभग सभी मुख्य क्षेत्रीय भाषाओं में छपता है। इस पैम्फ़लेट का शीर्षक है 'क़ुरआन की कुछ आयतें जो ईमानवालों (मुसलमानों) को अन्य धर्मावलम्बियों से झगड़ा करने का आदेश देती हैं', जैसा कि किताब की शुरुआत में 'जब मुझे सत्य का ज्ञान हुआ' में मैंने लिखा है कि इसी पर्चे को पढ़कर मैं भ्रमित हो गया था। यह पर्चा जैसा छपा है, वैसा ही नीचे दे रहा हूँ:

क़ुरआन की कुछ आयतें जो ईमानवालों (मुसलमानों) को अन्य धर्मावलम्बियों से झगड़ा करने का आदेश देती हैं।

1- ''फिर, जब हराम के महीने बीत जाएं, तो 'मुश्रिकों' को जहाँ कहीं पाओ क़त्ल करो, और पकड़ो, और उन्हें घेरो, और हर घात की जगह उनकी ताक में बैठो। फिर यदि वे 'तौबा' कर लें, नमाज़ क़ायम करें और ज़कात दें, तो उनका मार्ग छोड़ दो। निस्सन्देह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करनेवाला है।'' (10, 9, 5)

2- ''हे 'ईमान' लानेवालो! 'मुश्रिक' (मूर्तिपूजक) नापाक हैं।''

(10, 9, 28)

3- ''नि:सन्देह 'काफ़िर' तुम्हारे खुले दुश्मन हैं।'' (5, 4, 101)

4- ''हे 'ईमान' लानेवालो! (मुसलमानो!) उन 'काफ़िरों' से लड़ो जो तुम्हारे आस-पास हैं, और चाहिए कि वे तुममें सख़्ती पायें।'' (11, 9, 123)

5- ''जिन लोगों ने हमारी 'आयतों' का इनकार किया, उन्हें हम जल्द अग्नि में झोंक देंगे। जब उनकी खालें पक जायेंगी तो हम उन्हें दूसरी खालों से बदल देंगे ताकि वे यातना का रसास्वादन कर लें। नि:सन्देह अल्लाह प्रभुत्वशाली तत्वदर्शी है।'' (5, 4, 56)

6- ''हे 'ईमान' लानेवालो! (मुसलमानो!) अपने बापों और भाइयों को अपना मित्र मत बनाओ यदि वे 'ईमान' की अपेक्षा 'कुफ़्र' को पसन्द करें। और तुम में से जो कोई उनसे मित्रता का नाता जोड़ेगा, तो ऐसे ही लोग ज़ालिम होंगे।'' (10, 9, 23)

7- ''अल्लाह 'काफ़िर' लोगों को मार्ग नहीं दिखाता।'' (10, 9, 37)

8- ''हे 'ईमान' लानेवालो! ----------और 'काफ़िरों' को अपना मित्र मत बनाओ। अल्लाह से डरते रहो यदि तुम ईमान वाले हो।''

(6, 5, 57)

9- ''फिटकारे हुए (ग़ैरमुस्लिम) जहाँ कहीं पाए जाएंगे पकड़े जाएंगे और बुरी तरह क़त्ल किए जाएंगे।'' (22, 33, 61)

10- ''(कहा जाएगा) : निश्चय ही तुम और वह जिसे तुम अल्लाह के सिवा पूजते थे 'जहन्नम' का ईंधन हो। तुम अवश्य उसके घाट उतरोगे।''

(17, 21, 98)

11- ''और उससे बढ़कर ज़ालिम कौन होगा जिसे उसके 'रब' की 'आयतों' के द्वारा चेताया जाए, और फिर वह उनसे मुंह फेर ले। निश्चय ही हमें ऐसे अपराधियों से बदला लेना है।'' (21, 32, 22)

12- ''अल्लाह ने तुमसे बहुत-सी 'ग़नीमतों' (लूट) का वादा किया है जो तुम्हारे हाथ आएंगी।'' (26, 48, 20)

13- ''तो जो कुछ 'ग़नीमत' (लूट) का माल तुमने हासिल किया है उसे 'हलाल' व पाक समझकर खाओ,'' (10, 8, 69)

14- ''हे नबी! 'काफिरों' और 'मुनाफ़िक़ों' के साथ जिहाद करो, और उनपर सख़्ती करो और उनका ठिकाना 'जहन्नम' है, और बुरी जगह है जहाँ पहुँचे।'' (28, 66, 9)

15- ''तो अवश्य हम 'कुफ़्र' करनेवालों को यातना का मज़ा चखाएंगे, और अवश्य ही हम उन्हें सबसे बुरा बदला देंगे उस कर्म का जो वे करते थे।''

(24, 41, 27)

16- ''यह बदला है अल्लाह के शत्रुओं का ('जहन्नम' की) आग। इसी में उनका सदा घर है, इसके बदले में कि हमारी 'आयतों' का इन्कार करते थे।''

(24, 41, 28)

17- ''नि:सन्देह अल्लाह ने 'ईमान' वालों (मुसलमानों) से उनके प्राणों और मालों को इसके बदले में ख़रीद लिया है कि उनके लिए 'जन्नत' है वे अल्लाह के मार्ग में लड़ते हैं तो मारते भी हैं और मारे भी जाते हैं।''

(11, 9, 111)

18- ''अल्लाह ने इन मुनाफ़िक़ (अर्ध मुस्लिम) पुरुषों और मुनाफ़िक़ स्त्रियों और 'काफ़िरों' से 'जहन्नम' की आग का वादा किया है जिसमें वे सदा रहेंगे। यही उन्हें बस है। अल्लाह ने उन्हें लानत की और उनके लिए स्थायी यातना है।'' (10, 9, 68)

19- ''हे नबी! 'ईमान' वालों (मुसलमानों) को लड़ाई पर उभारो। यदि तुममें 20 जमे रहनेवाले होंगे तो वे 200 पर प्रभुत्व प्राप्त करेंगे, और यदि तुम में 100 हों तो 1000 'काफ़िरों' पर भारी रहेंगे, क्योंकि वे ऐसे लोग हैं जो समझ-बूझ नहीं रखते।'' (10, 8, 65)

20- ''हे ईमान लाने वालो (मुसलमानो) तुम 'यहूदियों' और 'ईसाइयों' को मित्र न बनाओ। ये आपस में एक दूसरे के मित्र हैं। और जो कोई तुम में से उनको मित्र बनाएगा, वह उन्हीं में से होगा। निस्सन्देह अल्लाह ज़ुल्म करने वालों को मार्ग नहीं दिखाता।'' (6, 5, 51)

21- ''किताब वाले जो न अल्लाह पर 'ईमान' लाते हैं न अन्तिम दिन पर, न उसे 'हराम' करते हैं जिसे अल्लाह और उसके 'रसूल' ने हराम ठहराया है, और न सच्चे 'दीन' को अपना दीन बनाते हैं, उनसे लड़ो यहाँ तक कि वे अप्रतिष्ठित (अपमानित) होकर अपने हाथों से 'जिज़या' देने लगें।''

(10, 9, 29)

22- ''------फिर हमने उनके बीच 'क़ियामत' के दिन तक के लिए वैमनस्य और द्वेष की आग भड़का दी, और अल्लाह जल्द उन्हें बता देगा जो कुछ वे करते रहे हैं।'' (6, 5, 14)

23- ''वे चाहते हैं कि जिस तरह से वे 'काफ़िर' हुए हैं उसी तरह से तुम भी 'काफ़िर' हो जाओ, फिर तुम एक जैसे हो जाओ तो उनमें से किसी को अपना साथी न बनाना जब तक वे अल्लाह की राह में हिजरत न करें, और यदि वे इससे फिर जावें तो उन्हें जहाँ कहीं पाओ पकड़ो और उनका वध (क़त्ल) करो। और उनमें से किसी को साथी और सहायक मत बनाना।'' (5, 4, 89)

24- ''उन (काफ़िरों) से लड़ो! अल्लाह तुम्हारे हाथों उन्हें यातना देगा, और उन्हें रुसवा करेगा और उनके मुक़ाबले में तुम्हारी सहायता करेगा, और 'ईमान' वालों के दिल ठंडे करेगा।'' (10, 9, 14)

उपरोक्त आयतों से स्पष्ट है कि इनमें ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, कपट, लड़ाई-झगड़ा, लूट-मार और हत्या करने के आदेश मिलते हैं। इन्हीं कारणों से देश व विश्व में मुस्लिमों व ग़ैर-मुस्लिमों के बीच दंगे हुआ करते हैं।

दिल्ली प्रशासन ने सन् 1985 में सर्व श्री इन्द्रसेन शर्मा और राजकुमार आर्य के विरुद्ध दिल्ली के मैट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट की अदालत में, उक्त पत्रक छापने के आरोप में मुक़दमा किया था। न्यायालय ने 31 जुलाई 1986 को उक्त दोनों महानुभावों को बरी करते हुए निर्णय दिया कि :

''क़ुरआन मजीद की पवित्र पुस्तक के प्रति आदर रखते हुए उक्त आयतों के सूक्ष्म अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ये आयतें बहुत हानिकारक हैं और घृणा की शिक्षा देती हैं, जिससे मुसलमानों और देश के अन्य वर्गों में भेदभाव को बढ़ावा मिलने की सम्भावना होती है।''

हिन्दू रायटर्स फोरम, नई दिल्ली-27 द्वारा पुनर्मुद्रित एवं प्रकाशित।

ऊपर दिए गए इस पैम्फ़लेट का सबसे पहले पोस्टर छापा गया था, जिसे श्री इन्द्रसेन शर्मा (तत्कालीन उप प्रधान, हिन्दू महासभा, दिल्ली) और श्री राजकुमार आर्य ने छपवाया था। इस पोस्टर में क़ुरआन मजीद की आयतें, मुहम्मद फारूक़ ख़ां द्वारा हिन्दी में अनुवादित तथा मक्तबा अल हसनात रामपुर से 1966 में प्रकाशित क़ुरआन मजीद से ली गई थीं। यह पोस्टर छापने के कारण इन दोनों लोगों पर इण्डियन पेनल कोड की धारा 153 ए और 165 ए के अन्तर्गत (एफ़0 आई0 आर0 237/83यू0/एस, 235ए, 1पी0सी0 हौज़ क़ाज़ी, पुलिस स्टेशन दिल्ली में) मुक़दमा दर्ज किया गया था जिसमें उक्त फ़ैसला हुआ।

अब हम देखेंगे कि क्या इस पैम्फ़लेट की ये आयतें वास्तव में विभिन्न वर्गों के बीच घृणा फैलाने व झगड़ा करानेवाली हैं?

पैम्फ़लेट में लिखी पहले क्रम की आयत है :

''फिर, जब हराम के महीने बीत जाएं, तो 'मुश्रिकों' को जहाँ कहीं पाओ क़त्ल करो, और पकड़ो, और उन्हें घेरो, और हर घात की जगह उनकी ताक में बैठो। फिर यदि वे 'तौबा' कर लें नमाज़ क़ायम

करें और, ज़कात दें, तो उनका मार्ग छोड़ दो। नि:सन्देह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करनेवाला है।''

(क़ुरआन, सूरा- 9, आयत- 5)

इस आयत के संदर्भ मेंह्न जैसा कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी से स्पष्ट है कि मक्का में और मदीना जाने के बाद भी मुश्रिक काफ़िर क़ुरैश, अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पीछे पड़े थे। वे मुहम्मद (सल्ल०) को और सत्य-धर्म इस्लाम को समाप्त करने के लिए हर सम्भव कोशिश करते रहते। काफ़िर क़ुरैश ने अल्लाह के रसूल को कभी चैन से बैठने नहीं दिया। वे उनको सदैव सताते ही रहे। इसके लिए वे सदैव लड़ाई की साज़िश रचते रहते।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के हिजरत के छठवें साल ज़ीक़ादा महीने में आप (सल्ल०) सैकड़ों मुसलमानों के साथ हज के लिए मदीना से मक्का रवाना हुए। लेकिन मुनाफ़िकों (यानी कपटाचारियों) ने इसकी ख़बर क़ुरैश को दे दी। क़ुरैश पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) को घेरने का कोई मौक़ा हाथ से जाने न देते। इस बार भी वे घात लगाकर रास्ते में बैठ गए। इसकी ख़बर मुहम्मद (सल्ल०) को लग गई। आपने रास्ता बदल दिया और मक्का के पास हुदैबिया कुएं के पास पड़ाव डाला। कुएं के नाम पर ही इस जगह का नाम हुदैबिया था।

जब क़ुरैश को पता चला कि मुहम्मद अपने अनुयायी मुसलमानों के साथ मक्का के पास पहुँच चुके हैं और हुदैबिया पर पड़ाव डाले हुए हैं, तो काफ़िरों ने कुछ लोगों को आपकी हत्या के लिए हुदैबिया भेजा, लेकिन वे सब पहले ही मुसलमानों के द्वारा पकड़ लिए गए और अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के सामने लाए गए। लेकिन आपने उन्हें ग़लती का एहसास कराकर माफ़ कर दिया।

इसके बाद हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने लड़ाई-झगड़ा, ख़ून-ख़राबा टालने के लिए हज़रत उस्मान (रज़ि०) को क़ुरैश से बात करने के लिए भेजा। लेकिन क़ुरैश ने हज़रत उस्मान (रज़ि०) को क़ैद कर लिया। इधर हुदैबिया में पड़ाव डाले अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को ख़बर लगी कि हज़रत उस्मान (रज़ि०) क़त्ल कर दिए गए। यह सुनते ही मुसलमान हज़रत उस्मान (रज़ि०) के क़त्ल का बदला लेने के लिए तैयारी करने लगे।

जब क़ुरैश को पता चला कि मुसलमान अब मरने-मारने को तैयार हैं और अब युद्ध निश्चित है तो बातचीत के लिए सुहैल-बिन-अम्र को हज़रत मुहम्मद

(सल्ल०) के पास हुदैबिया भेजा। सुहैल से मालूम हुआ कि उस्मान (रज़ि०) का क़त्ल नहीं हुआ है, वे क़ुरैश की क़ैद में हैं। सुहैल ने हज़रत उस्मान (रज़ि०) को क़ैद से आज़ाद करने व युद्ध टालने के लिए कुछ शर्तें पेश कीं।

● पहली शर्त थीह्न इस साल आप सब बिना उमरा (काबा-दर्शन) किए लौट जाएं। अगले साल आएं लेकिन तीन दिन बाद चले जाएं।

● दूसरी शर्त थीह्न हम क़ुरैश का कोई आदमी मुसलमान बनकर यदि मदीना आए तो उसे हमें वापस किया जाए। लेकिन यदि कोई मुसलमान मदीना छोड़कर मक्का में आ जाए, तो हम वापस नहीं करेंगे।

● तीसरी शर्त थीह्न कोई भी क़बीला अपनी मर्ज़ी से क़ुरैश के साथ या मुसलमानों के साथ शामिल हो सकता है।

● समझौते में चौथी शर्त थी किह्न इन शर्तों को मानने के बाद क़ुरैश और मुसलमान न एक-दूसरे पर हमला करेंगे और न ही एक-दूसरे के सहयोगी क़बीलों पर हमला करेंगे। यह समझौता 10 साल के लिए हुआ, जो हुदैबिया समझौते के नाम से जाना जाता है।

हालाँकि ये शर्तें एक तरफ़ा और अन्यायपूर्ण थीं, फिर भी शान्ति और सब्र के दूत मुहम्मद (सल्ल०) ने इन्हें स्वीकार कर लिया, ताकि शान्ति स्थापित हो सके।

लेकिन समझौता होने के दो ही साल बाद बनू-बक्र नामक क़बीले ने जो मक्का के क़ुरैश का सहयोगी था, मुसलमानों के सहयोगी क़बीले ख़ुज़ाआ पर हमला कर दिया। इस हमले में क़ुरैश ने बनू-बक्र क़बीले का साथ दिया।

ख़ुज़ाआ क़बीले के लोग भागकर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के पास पहुँचे और इस हमले की ख़बर दी। **पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) ने शान्ति के लिए इतना झुककर समझौता किया था इसके बाद भी क़ुरैश ने धोखा देकर समझौता तोड़ डाला।**

अब युद्ध एक आवश्यकता थी, धोखा देनेवालों को दण्डित करना शान्ति स्थापना के लिए ज़रूरी था। इसी ज़रूरत को देखते हुए अल्लाह की ओर से सूरा-9 की आयतें अवतरित हुईं।

इनके अवतरित होने पर नबी (सल्ल०) ने सूरा-9 की आयतें सुनाने के

लिए हज़रत अली (रज़ि०) को मुश्रिकों के पास भेजा। हज़रत अली (रज़ि०) ने जाकर मुश्रिकों से यह कहते हुए कि मुसलमानों के लिए अल्लाह का फ़रमान आ चुका है उनको सूरा-9 की ये आयतें सुना दीं :

"(ऐ मुसलमानो! अब) खुदा और उसके रसूल की तरफ़ से मुश्रिकों से, जिनसे तुमने अह्द (समझौता) कर रखा था, बेज़ारी (और जंग की तैयारी) है।

तो (मुश्रिको! तुम) ज़मीन में चार महीने चल फिर लो और जान रखो कि तुम खुदा को आजिज़ न कर सकोगे और यह भी कि खुदा काफ़िरों को रुसवा करनेवाला है।

और हज्जे-अक्बर के दिन खुदा और उसके रसूल की तरफ़ से लोगों को आगाह किया जाता है कि खुदा मुश्रिकों से बेज़ार है और उसका रसूल भी (उनसे दस्तबरदार है)। पस अगर तुम तौबा कर लो, तो तुम्हारे हक़ में बेहतर है और न मानो (और खुदा से मुक़ाबला करो) तो जान रखो कि तुम खुदा को हरा नहीं सकोगे और (ऐ पैग़म्बर!) काफ़िरों को दुःख देनेवाले अज़ाब की ख़बर सुना दो।"

(क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 1-3)

अली ने मुश्रिकों से कह दिया कि "यह अल्लाह का फ़रमान है अब समझौता टूट चुका है और यह तुम्हारे द्वारा तोड़ा गया है इसलिए अब इज़्ज़त के चार महीने बीतने के बाद तुमसे जंग (यानी युद्ध) है।"

समझौता तोड़कर हमला करने वालों पर जवाबी हमला कर उन्हें कुचल देना मुसलमानों का हक़ बनता था, वह भी मक्का के उन मुश्रिकों के विरुद्ध जो मुसलमानों के लिए सदैव से अत्याचारी व आक्रमणकारी थे। इसी लिए सर्वोच्च न्यायकर्ता अल्लाह ने पांचवीं आयत का फ़रमान भेजा।

इस पांचवीं आयत से पहले वाली चौथी आयत है :

"अलबत्ता, जिन मुश्रिकों के साथ तुमने अह्द किया हो, और उन्होंने तुम्हारा किसी तरह का क़ुसूर न किया हो और न तुम्हारे मुक़ाबले में किसी की मदद की हो, तो जिस मुद्दत तक उनके साथ अह्द किया हो, उसे पूरा करो (कि) खुदा परहेज़गारों को दोस्त रखता है।" (क़ुरआन, सूरा-9, आयत-4)

इससे स्पष्ट है कि जंग का यह एलान उन मुश्रिकों के विरुद्ध था जिन्होंने युद्ध के लिए उकसाया, मजबूर किया, उन मुश्रिकों के विरुद्ध नहीं जिन्होंने ऐसा नहीं किया। युद्ध का यह एलान आत्मरक्षा व धर्मरक्षा के लिए था।

अत: अन्यायियों, अत्याचारियों द्वारा ज़बरदस्ती थोपे गए युद्ध से अपने बचाव के लिए किए जानेवाले किसी भी प्रकार के प्रयास को किसी भी तरह झगड़ा कराने वाला नहीं कहा जा सकता।

अत्याचारियों और अन्यायियों से अपनी व अपने धर्म की रक्षा के लिए युद्ध करना और युद्ध के लिए सैनिकों को उत्साहित करना धर्मसम्मत है।

इस पर्चे को छापने और बाँटने वाले लोग क्या नहीं जानते कि अत्याचारियों और अन्यायियों के विनाश के लिए ही योगेश्वर श्री कृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश दिया था। क्या यह उपदेश लड़ाई-झगड़ा करानेवाला या घृणा फैलाने वाला है? यदि नहीं, तो फिर क़ुरआन के लिए ऐसा क्यों कहा जाता है?

फिर यह पूरी सूरा उस समय मक्का के अत्याचारी मुश्रिकों के विरुद्ध उतारी गई , जो अल्लाह के रसूल के ही भाई-बन्धु क़ुरैश थे। फिर इसे आज के सन्दर्भ में और हिन्दुओं के लिए क्यों लिया जा रहा है? क्या यह हिन्दुओं व अन्य ग़ैर-मुस्लिमों को उकसाने और उनके मन में मुसलमानों के लिए घृणा भरने तथा इस्लाम को बदनाम करने की घृणित साज़िश नहीं है?

पैम्फ़लेट में लिखी दूसरे क्रम की आयत है :

''हे 'ईमान' लानेवालो! 'मुश्रिक' (मूर्तिपूजक) नापाक हैं।''

(क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 28)

लगातार झगड़ा-फ़साद, अन्याय-अत्याचार करनेवाले अन्यायी, अत्याचारी अपवित्र नहीं हैं तो और क्या हैं?

पैम्फ़लेट में लिखी तीसरे क्रम की आयत है :

''नि:सन्देह 'काफ़िर' तुम्हारे खुले दुश्मन हैं।''

(क़ुरआन, सूरा-4, आयत- 101)

वास्तव में जान-बूझकर इस आयत का एक अंश ही दिया गया है।

पूरी आयत ध्यान देकर पढ़ें :

“और जब तुम सफ़र को जाओ, तो तुमपर कुछ गुनाह नहीं कि नमाज़ को कम करके पढ़ो, बशर्ते कि तुमको डर हो कि काफ़िर लोग तुमको ईज़ा (तकलीफ़) देंगे। बेशक काफ़िर तुम्हारे खुले दुश्मन हैं।”

(क़ुरआन, सूरा-4, आयत- 101)

इस पूरी आयत से स्पष्ट है कि मक्का व आस-पास के काफ़िर जो मुसलमानों को सदैव नुक़्सान पहुंचाना चाहते थे (देखिए हज़रत मुहम्मद सल्ल० की जीवनी), ऐसे दुश्मन काफ़िरों से सावधान रहने के लिए ही इस 101वीं आयत में कहा गया है “कि निःसन्देह ‘काफ़िर’ तुम्हारे खुले दुश्मन हैं।”

इससे अगली 102वीं आयत से यह और स्पष्ट हो जाता है जिसमें अल्लाह ने और सावधान रहने का फ़रमान दिया है कि :

“और (ऐ पैग़म्बर !) जब तुम उन (मुजाहिदों के लश्कर) में हो और उनको नमाज़ पढ़ाने लगो, तो चाहिए कि एक जमाअत तुम्हारे साथ हथियारों से लैस होकर खड़ी रहे, जब वे सज्दा कर चुकें तो परे हो जाएं, फिर दूसरी जमाअत, जिसने नमाज़ नहीं पढ़ी (उनकी जगह आए और होशियार और हथियारों से लैस होकर) तुम्हारे साथ नमाज़ अदा करे। काफ़िर इस घात में हैं कि तुम ज़रा अपने हथियारों और सामानों से ग़ाफ़िल हो जाओ तो तुम पर एकबारगी हमला कर देंगे।” (क़ुरआन, सूरा-4, आयत-102)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी व ऊपर लिखे तथ्यों से स्पष्ट है कि मुसलमानों के लिए काफ़िरों से अपनी व अपने धर्म की रक्षा करने के लिए ऐसा करना आवश्यक था। अतः इस आयत में झगड़ा कराने, घृणा फैलाने या कपट करने जैसी कोई बात नहीं है, जैसा कि पैम्फ़लेट में लिखा गया है। जबकि जान-बूझकर कपटपूर्ण ढंग से आयत का मतलब बदलने के लिए आयत के केवल एक अंश को लिखकर और शेष को छिपाकर जनता को वरग़लाने, घृणा फैलाने व झगड़ा कराने का कार्य तो वे लोग कर रहे हैं, जो इसे छापने व पूरे देश में बांटने का कार्य कर रहे हैं। जनता ऐसे लोगों से सावधान रहे।

पैम्फ़लेट में लिखी चौथे क्रम की आयत है :

"हे 'ईमान' लानेवालो! (मुसलमानो!) उन 'काफ़िरों' से लड़ो जो तुम्हारे आस-पास हैं, और चाहिए कि वे तुममें सख़्ती पाएं।"

(क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 123)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी व ऊपर लिखे जा चुके तथ्यों से स्पष्ट है कि मुसलमानों को काफ़िरों से अपनी व अपने धर्म की रक्षा करने के लिए ऐसा करना आवश्यक था। इसलिए इस आत्मरक्षा वाली आयत को झगड़ा करानेवाली नहीं कहा जा सकता।

पैम्फ़लेट में लिखी 5वें क्रम की आयत है :

"जिन लोगों ने हमारी 'आयतों' का इन्कार किया, उन्हें हम जल्द अग्नि में झोंक देंगे। जब उनकी खालें पक जाएँगी तो हम उन्हें दूसरी खालों से बदल देंगे ताकि वे यातना का रसास्वादन कर लें। नि:सन्देह अल्लाह प्रभुत्वशाली तत्त्वदर्शी है।"

(क़ुरआन, सूरा-4, आयत- 56)

यह तो धर्म-विरुद्ध जाने पर दोज़ख़ (यानी नरक) में दिया जानेवाला दण्ड है। सभी धर्मों में उस धर्म की मान्यताओं के अनुसार चलने पर स्वर्ग का अकल्पनीय सुख और विरुद्ध जाने पर नरक का भयानक दण्ड है। फिर क़ुरआन में बताए गए नरक (यानी दोज़ख़) के दण्ड के लिए एतराज़ क्यों? इस मामले में इन पर्चा छापने व बाँटने वालों को हस्तक्षेप करने का क्या अधिकार है?

या फिर क्या इन लोगों को नरक में मानवाधिकारों की चिन्ता सताने लगी है?

पैम्फ़लेट में लिखी छठे क्रम की आयत है :

"हे 'ईमान' लाने वालो! (मुसलमानो!) अपने बापों और भाइयों को अपना मित्र मत बनाओ यदि वे 'ईमान' की अपेक्षा 'कुफ़्र' को पसन्द करें। और तुम में से जो कोई उनसे मित्रता का नाता जोड़ेगा, तो ऐसे ही लोग ज़ालिम होंगे।" (क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 23)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) जब एकेश्वरवाद का सन्देश दे रहे थे, तब कोई

व्यक्ति अल्लाह के रसूल (सल्ल०) द्वारा दिए जा रहे तौहीद (यानी एकेश्वरवाद) के पैग़ाम पर ईमान (यानी विश्वास) लाकर मुसलमान बनता और फिर अपने माँ-बाप, बहन-भाई के पास जाता, तो वे एकेश्वरवाद से उसका विश्वास ख़त्म कराके फिर से बहुईश्वरवादी बना देते। इस कारण एकेश्वरवाद की रक्षा के लिए अल्लाह ने यह आयत उतारी जिससे एकेश्वरवाद के सत्य को दबाया न जा सके। अत: सत्य की रक्षा के लिए आई इस आयत को झगड़ा कराने वाली या घृणा फैलानेवाली आयत कैसे कहा जा सकता है ? जो ऐसा कहते हैं, वे अज्ञानी हैं।

पैम्फ़लेट में लिखी 7वें क्रम की आयत है :

''अल्लाह 'काफ़िर' लोगों को मार्ग नहीं दिखाता।''

(क़ुरआन, सूरा-9, आयत-37)

आयत का मतलब बदलने के लिए इस आयत को भी जान-बूझकर पूरा नहीं दिया गया, इसलिए इसका सही मक़सद समझ में नहीं आता। इसे समझने के लिए हम आयत को पूरा दे रहे हैं :

''अम्न के किसी महीने को हटाकर आगे-पीछे कर देना कुफ़्र में बढ़ोतरी करता है। इससे काफ़िर गुमराही में पड़े रहते हैं। एक साल तो उसको हलाल समझ लेते हैं और दूसरे साल हराम, ताकि अदब के महीनों की, जो ख़ुदा ने मुक़र्रर किये हैं, गिनती पूरी कर लें और जो ख़ुदा ने मना किया है, उसको जायज़ कर लें। उनके बुरे अमल उनको भले दिखाई देते हैं और ख़ुदा काफ़िर लोगों को हिदायत नहीं दिया करता।'' (क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 37)

अदब या अम्न (यानी शान्ति) के चार महीने होते हैं, वे हैं- ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्जा, मुहर्रम और रजब। इन चार महीनों में लड़ाई-झगड़ा नहीं किया जाता। काफ़िर क़ुरैश इन महीनों में से किसी महीने को अपनी ज़रूरत के हिसाब से जान-बूझकर आगे-पीछे कर लड़ाई-झगड़ा करने के लिए मान्यता का उल्लंघन किया करते थे। अनजाने में भटके हुए को मार्ग दिखाया जा सकता है, लेकिन जानबूझ कर भटके हुए को मार्ग ईश्वर भी नहीं दिखाता। इसी सन्दर्भ में यह

आयत उतरी। इस आयत का लड़ाई-झगड़ा कराने या घृणा फैलाने से कोई सम्बन्ध ही नहीं है।

पैम्फ़लेट में लिखी 8वें क्रम की आयत है :

''हे 'ईमान' लानेवालो! -------- और 'काफ़िरों' को अपना मित्र मत बनाओ। अल्लाह से डरते रहो यदि तुम ईमान वाले हो।''

(क़ुरआन, सूरा-5, आयत- 57)

यह आयत भी अधूरी दी गई है। आयत के बीच का अंश जान-बूझकर छिपाने की शरारत की गई है। पूरी आयत है :

''ऐ ईमान लानेवालो! जिन लोगों को तुमसे पहले किताबें दी गई थीं, उनको और काफ़िरों को जिन्होंने तुम्हारे दीन [धर्म] को हंसी और खेल बना रखा है, दोस्त न बनाओ और मोमिन हो तो ख़ुदा से डरते रहो।'' (क़ुरआन, सूरा-5, आयत-57)

आयत को पढ़ने से साफ़ है कि काफ़िर क़ुरैश तथा उनके सहयोगी यहूदी और ईसाई जो मुसलमानों के धर्म की हंसी उड़ाया करते थे, उनको दोस्त न बनाने के लिए यह आयत आई। यह लड़ाई-झगड़े के लिए उकसाने वाली या घृणा फैलाने वाली कहाँ से है? इसके विपरीत पाठक स्वयं देखें कि पैम्फ़लेट में 'जिन्होंने तुम्हारे धर्म को हंसी और खेल बना रखा है', को जान-बूझ कर छिपाकर उसका मतलब पूरी तरह बदल देने की साज़िश करनेवाले क्या चाहते हैं?

पैम्फलेट में लिखी 9वें क्रम की आयत है :

''फिटकारे हुए (ग़ैर-मुस्लिम) जहाँ कहीं पाए जायेंगे पकड़े जाएंगे और बुरी तरह क़त्ल किए जाएंगे।''

(क़ुरआन, सूरा-33, आयत-61)

इस आयत का सही मतलब तभी पता चलता है जब इसे इसके पहले वाली 60वीं आयत से जोड़ा जाए।

''अगर मुनाफ़िक़ [यानी कपटाचारी] और वे लोग जिनके दिलों में

मर्ज़ है और जो मदीना (के शहर) में बुरी-बुरी ख़बरें उड़ाया करते हैं, (अपने किरदार से) रुकेंगे नहीं, तो हम तुमको उनके पीछे लगा देंगे, फिर वहाँ तुम्हारे पड़ोस में न रह सकेंगे, मगर थोड़े दिन।

(वे भी फिटकारे हुए) जहाँ पाए गए, पकड़े गए और जान से मार डाले गए।'' (क़ुरआन, सूरा-33, आयत- 60, 61)

उस समय मदीना शहर जहाँ अल्लाह के रसूल (सल्ल०) का निवास था, क़ुरैश के हमले का सदैव अन्देशा रहता था। कुछ मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) और यहूदी तथा ईसाई जो मुसलमानों के पास भी आते और काफ़िर क़ुरैश से भी मिले रहते और अफ़वाहें उड़ाया करते थे। युद्ध जैसे माहौल में जहाँ हमले का सदैव अन्देशा हो, अफ़वाह उड़ाने वाले जासूस कितने ख़तरनाक हो सकते हैं, इसका अन्दाज़ा किया जा सकता है। आज के क़ानून में भी ऐसे लोगों की सज़ा मौत हो सकती है। वास्तव में शान्ति की स्थापना के लिए उनको यही दण्ड उचित है। यह न्यायसंगत है। अत: इस आयत को झगड़ा करानेवाली कहना दुर्भाग्यपूर्ण है।

पैम्फ़लेट में लिखी 10वें क्रम की आयत है :

''(कहा जाएगा) : निश्चय ही तुम और वह जिसे तुम अल्लाह के सिवा पूजते थे 'जहन्नम' का ईंधन हो। तुम अवश्य उसके घाट उतरोगे।'' (क़ुरआन, सूरा-21, आयत-98)

इस्लाम एकेश्वरवादी मज़हब है, जिसके अनुसार एक ईश्वर 'अल्लाह' के अलावा किसी दूसरे को पूजना सबसे बड़ा पाप है। इस आयत में इसी पाप के लिए अल्लाह मरने के बाद जहन्नम (यानी नरक) का दण्ड देगा।

पैम्फ़लेट में लिखी पांचवें क्रम की आयत में हम इस विषय में लिख चुके हैं। अत: इस आयत को भी झगड़ा करानेवाली आयत कहना न्यायसंगत नहीं है।

पैम्फ़लेट में लिखी 11वें क्रम की आयत है :

''और उससे बढ़कर ज़ालिम कौन होगा जिसे उसके 'रब' की 'आयतों' के द्वारा चेताया जाए, और फिर वह उनसे मुंह फेर ले। निश्चय ही हमें ऐसे अपराधियों से बदला लेना है।''

(क़ुरआन, सूरा-32, आयत- 22)

इस आयत में भी इसके पहले लिखी आयत की ही तरह अल्लाह उन लोगों को नरक का दण्ड देगा जो अल्लाह की आयतों को नहीं मानते। ये परलोक की बातें हैं अत: इस आयत का सम्बन्ध इस लोक में लड़ाई-झगड़ा कराने या घृणा फैलाने से जोड़ना शरारतपूर्ण हरकत है।

पैम्फ़लेट में लिखी 12वें क्रम की आयत है :

> ''अल्लाह ने तुमसे बहुत-सी 'ग़नीमतों' (लूट) का वादा किया है जो तुम्हारे हाथ आएंगी,'' (क़ुरआन, सूरा-48, आयत-20)

पहले मैं यह बता दूँ कि ग़नीमत का अर्थ लूट नहीं बल्कि शत्रु की क़ब्ज़ा की गई सम्पत्ति होता है। उस समय मुसलमानों के अस्तित्व को मिटाने के लिए हमले होते या हमले की तैयारी हो रही होती। काफ़िर और उनके सहयोगी यहूदी व ईसाई धन से शक्तिशाली थे। ऐसे शक्तिशाली दुश्मनों से बचाव के लिए उनके विरुद्ध मुसलमानों का हौसला बढ़ाए रखने के लिए अल्लाह की ओर से वायदा हुआ।

यह युद्ध के नियमों के अनुसार जायज़ है। आज भी शत्रु की क़ब्ज़ा की गई सम्पत्ति विजेता की होती है।

अत: इसे झगड़ा करानेवाली आयत कहना दुर्भाग्यपूर्ण है।

पैम्फ़लेट में लिखी 13वें क्रम की आयत है :

> ''तो जो कुछ 'ग़नीमत' (लूट) का माल तुमने हासिल किया है उसे 'हलाल' व पाक समझकर खाओ,''
>
> (क़ुरआन, सूरा-8, आयत-69)

बारहवें क्रम की आयत में दिए हुए तर्क के अनुसार इस आयत का भी सम्बन्ध आत्मरक्षा के लिए किए जानेवाले युद्ध में मिली चल सम्पत्ति से है और युद्ध में हौसला बनाए रखने से है। इसे भी झगड़ा बढ़ानेवाली आयत कहना दुर्भाग्यपूर्ण है।

पैम्फ़लेट में लिखी 14वें क्रम की आयत है :

''हे नबी! 'काफ़िरों' और 'मुनाफ़िक़ों' के साथ जिहाद करो, और उनपर सख़्ती करो और उनका ठिकाना 'जहन्नम' है, और बुरी जगह है जहाँ पहुँचे।'' (क़ुरआन, सूरा-66, आयत- 9)

जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं कि काफ़िर क़ुरैश अन्यायी व अत्याचारी थे और मुनाफ़िक़ (यानी कपट करनेवाले कपटाचारी) मुसलमानों के हमदर्द बनकर आते, उनकी जासूसी करते और काफ़िर क़ुरैश को सारी सूचना पहुँचाते तथा काफ़िरों के साथ मिलकर अल्लाह के रसूल (सल्ल0) की खिल्ली उड़ाते और मुसलमानों के ख़िलाफ़ साज़िश रचते। ऐसे अधर्मियों के विरुद्ध लड़ना अधर्म को समाप्त कर धर्म की स्थापना करना है। ऐसे ही अत्याचारी कौरवों के लिए योगेश्वर श्री कृष्ण ने कहा था :

अथ चेत् त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि।

ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि॥

(गीता अध्याय 2 श्लोक- 33)

''हे अर्जुन! किन्तु यदि तू इस धर्मयुक्त युद्ध को न करेगा तो अपने धर्म और कीर्ति को खोकर पाप को प्राप्त होगा।''

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व जित्वा शत्रून्भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम्।

(अध्याय 11, श्लोक 33)

''इसलिए तू उठ! शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर, यश प्राप्त कर धन-धान्य से सम्पन्न राज्य को भोग।''

पोस्टर या पैम्फ़लेट छापने व बाँटने वाले श्रीमद्‌भगवद्‌गीता के इस आदेश को क्या झगड़ा-लड़ाई करानेवाला कहेंगे? यदि नहीं, तो इन्हीं परिस्थितियों में आत्मरक्षा व धर्मरक्षा के लिए अत्याचारियों के विरुद्ध जिहाद (यानी आत्मरक्षा व धर्मरक्षा के लिए युद्ध) करने का फ़रमान देनेवाली आयत को झगड़ा करानेवाली कैसे कह सकते हैं? क्या यह अन्यायपूर्ण नीति नहीं है? आख़िर किस उद्‌देश्य से यह सब किया जा रहा है?

पैम्फ़लेट में लिखी 15वें क्रम की आयत है :

''तो अवश्य हम 'कुफ़्र' करने वालों को यातना का मज़ा चखाएंगे, और अवश्य ही हम उन्हें सबसे बुरा बदला देंगे उस कर्म का जो वे करते थे।'' (क़ुरआन, सूरा-41, आयत-27)

उस आयत को तो लिखा जिसमें अल्लाह काफ़िरों को दण्डित करेगा, लेकिन यह दण्ड क्यों मिलेगा? इसकी वजह इस आयत के ठीक पहले वाली आयत (जिसकी यह पूरक आयत है) में है, उसे ये छिपा गए। अब इन दोनों आयतों को हम एक साथ दे रहे हैं। पाठक स्वयं देखें कि इस्लाम को बदनाम करने की साज़िश कैसे रची गई है? :

''और काफ़िर कहने लगे कि इस क़ुरआन को सुना ही न करो और (जब पढ़ने लगें तो) शोर मचा दिया करो, ताकि ग़ालिब रहो।

सो हम भी काफ़िरों को सख़्त अज़ाब के मज़े चखाएंगे, और बुरे अमल की जो वे करते थे सज़ा देंगे।''

(क़ुरआन, सूरा-41, आयत-26, 27)

अब यदि कोई अपनी धार्मिक पुस्तक का पाठ करने लगे या नमाज़ पढ़ने लगे, तो उस समय बाधा पहुँचाने के लिए शोर मचा देना क्या दुष्टतापूर्ण कर्म नहीं है? इस बुरे कर्म की सज़ा देने के लिए ईश्वर कहता है, तो क्या वह झगड़ा कराता है?

मेरी समझ में नहीं आ रहा कि पाप कर्मों का फल देनेवाली इस आयत में झगड़ा कराना कैसे दिखाई दिया?

पैम्फ़लेट में लिखी 16वें क्रम की आयत है :

''यह बदला है अल्लाह के शत्रुओं का ('जहन्नम' की) आग। इसी में उनका सदा घर है, इसके बदले में कि हमारी 'आयतों' का इन्कार करते थे।'' (क़ुरआन, सूरा-41, आयत-28)

यह आयत ऊपर पन्द्रहवें क्रम की आयत की पूरक है जिसमें काफ़िरों को मरने के बाद नरक का दण्ड है, जो परलोक की बात है इसका इस लोक में

लड़ाई-झगड़ा कराने या घृणा फैलाने से कोई सम्बन्ध नहीं है।

पैम्फ़लेट में लिखी 17वें क्रम की आयत है :

> ''निःसन्देह अल्लाह ने 'ईमान' वालों (मुसलमानों) से उनके प्राणों और मालों को इसके बदले में ख़रीद लिया है कि उनके लिए 'जन्नत' है; वे अल्लाह के मार्ग में लड़ते हैं तो मारते भी हैं और मारे भी जाते हैं।'' (क़ुरआन, सूरा-9, आयत-111)

गीता में है :

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।

तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः ॥

(गीता अध्याय-2, श्लोक- 37)

''या (तो तू युद्ध में) मारा जाकर स्वर्ग को प्राप्त होगा अथवा (संग्राम में) जीतकर, पृथ्वी का राज्य भोगेगा। इसलिए हे अर्जुन! (तू) युद्ध के लिए निश्चय करके खड़ा हो जा।''

गीता का यह आदेश लड़ाई-झगड़ा बढ़ानेवाला नहीं है। यह अधर्म को बढ़ानेवाला भी नहीं है, क्योंकि यह तो अन्यायियों व अत्याचारियों का विनाश कर धर्म की स्थापना के लिए किए जानेवाले युद्ध के लिए है।

इन्हीं परिस्थितियों में अन्यायी, अत्याचारी मुश्रिक काफ़िरों को समाप्त करने के लिए ठीक वैसा ही अल्लाह (यानी परमेश्वर) का फ़रमान भी सत्य-धर्म की स्थापना के लिए है, आत्मरक्षा के लिए है। फिर इसे ही झगड़ा करानेवाला क्यों कहा गया? ऐसा कहनेवाले क्या अन्यायपूर्ण नीति नहीं रखते? जनता को ऐसे लोगों से सावधान हो जाना चाहिए।

पैम्फ़लेट में लिखी 18वें क्रम की आयत है :

> ''अल्लाह ने इन मुनाफ़िक़ (अर्ध मुस्लिम) पुरुषों और मुनाफ़िक स्त्रियों और 'काफ़िरों' से 'जहन्नम' की आग का वादा किया है जिसमें वे सदा रहेंगे। यही उन्हें बस है। अल्लाह ने उन्हें लानत की और उनके लिए स्थायी यातना है।''
>
> (क़ुरआन, सूरा-9, आयत-68)

सूरा-9 की इस 68वीं आयत के पहले वाली 67वीं आयत को पढ़ने के बाद इस आयत को पढ़ें; पहले वाली 67वीं आयत है :

''मुनाफ़िक़ मर्द और मुनाफ़िक़ औरतें एक दूसरे के हमजिन्स (यानी एक ही तरह के) हैं, कि बुरे काम करने को कहते और नेक कामों से मना करते और (ख़र्च करने से) हाथ बन्द किए रहते हैं, उन्होंने ख़ुदा को भुला दिया तो ख़ुदा ने भी उनको भुला दिया। बेशक मुनाफ़िक़ ना-फ़रमान हैं।'' (क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 67)

स्पष्ट है मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) मर्द और औरतें लोगों को अच्छे कामों से रोकते और बुरे काम करने को कहते हैं। अच्छे काम के लिए खोटा सिक्का भी न देते। ख़ुदा (यानी परमेश्वर) को कभी याद न करते, उसकी अवज्ञा करते और ख़ुराफ़ात में लगे रहते। ऐसे पापियों को मरने के बाद क़ियामत के दिन जहन्नम (यानी नरक) की सज़ा की चेतावनी देनेवाली अल्लाह की यह आयत बुराई पर अच्छाई की जीत के लिए उतरी न कि लड़ाई-झगड़ा कराने के लिए।

पैम्फ़लेट में लिखी 19वें क्रम की आयत है :

''हे नबी! 'ईमान' वालों (मुसलमानों) को लड़ाई पर उभारो। यदि तुम में 20 जमे रहने वाले होंगे तो वे 200 पर प्रभुत्व प्राप्त करेंगे, और यदि तुममें 100 हों तो 1000 'काफ़िरों' पर भारी रहेंगे, क्योंकि वे ऐसे लोग हैं जो समझ-बूझ नहीं रखते।''

(क़ुरआन, सूरा-8, आयत- 65)

मक्का के अत्याचारी क़ुरैश व अल्लाह के रसूल (सल्ल0) के बीच होनेवाले युद्ध में क़ुरैश की संख्या अधिक होती और सत्य के रक्षक मुसलमानों की कम। ऐसी हालत में मुसलमानों का हौसला बढ़ाने व उन्हें युद्ध में जमाए रखने के लिए अल्लाह की ओर से यह आयत उतरी। यह युद्ध अत्याचारी व आक्रमणकारी काफ़िरों से था न कि सभी काफ़िरों या ग़ैर-मुसलमानों से। अत: यह आयत अन्य धर्मावलम्बियों से झगड़ा कराने का आदेश नहीं देती। इसके प्रमाण में हम एक आयत दे रहे हैं :

''जिन लोगों [यानी काफ़िरों] ने तुमसे दीन के बारे में जंग नहीं की और न तुमको तुम्हारे घरों से निकाला, उनके साथ भलाई और

इंसाफ का सुलूक करने से ख़ुदा तुमको मना नहीं करता। ख़ुदा तो इंसाफ़ करनेवालों को दोस्त रखता है।''

(क़ुरआन, सूरा-60, आयत- 8)

पैम्फ़लेट में लिखी 20वें क्रम की आयत है :

''हे ईमान लानेवालो (मुसलमानो) तुम 'यहूदियों' और 'ईसाइयों' को मित्र न बनाओ। ये आपस में एक दूसरे के मित्र हैं। और जो कोई तुममें से उनको मित्र बनाएगा, वह उन्हीं में से होगा। निःसन्देह अल्लाह ज़ुल्म करनेवालों को मार्ग नहीं दिखाता।''

(क़ुरआन, सूरा-5, आयत-51)

यहूदी और ईसाई ऊपरी तौर पर मुसलमानों से दोस्ती की बात करते थे लेकिन पीठ पीछे क़ुरैश की मदद करते और कहते, मुहम्मद से लड़ो हम तुम्हारे साथ हैं। उनकी इस चाल को नाकाम करने के लिए ही यह आयत उतरी जिसका उद्‌देश्य मुसलमानों को सावधान करना था, न कि झगड़ा कराना। इसके प्रमाण में क़ुरआन मजीद की यह आयत देखें :

''ख़ुदा उन्हीं लोगों के साथ तुमको दोस्ती करने से मना करता है, जिन्होंने तुमसे दीन के बारे में लड़ाई की और तुमको तुम्हारे घरों से निकाला और तुम्हारे निकालने में औरों की मदद की, तो जो लोग ऐसों से दोस्ती करेंगे, वही ज़ालिम हैं।''

(क़ुरआन, सूरा-60, आयत-9)

पैम्फ़लेट में लिखी 21वें क्रम की आयत है :

''किताबवाले जो न अल्लाह पर 'ईमान' लाते हैं न अन्तिम दिन पर, न उसे 'हराम' करते हैं जिसे अल्लाह और उसके 'रसूल' ने हराम ठहराया है, और न सच्चे 'दीन' को अपना 'दीन' बनाते हैं, उनसे लड़ो यहाँ तक कि वे अप्रतिष्ठित (अपमानित) होकर अपने हाथों से 'जिज़या' देने लगें।'' (क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 29)

इस्लाम के अनुसार तौरात, ज़ूबूर (Old Testament), इंजील (New Testament) और क़ुरआन मजीद अल्लाह की भेजी हुई किताबें हैं, इसलिए इन

किताबों पर अलग-अलग ईमान लानेवाले क्रमश: यहूदी, ईसाई और मुसलमान 'किताबवाले' या 'अह्ले-किताब' कहलाए। यहाँ इस आयत में किताबवाले से मतलब यहूदियों और ईसाइयों से है।

ईश्वरीय पुस्तकें रहस्यमयी होती हैं इसलिए इस आयत को पढ़ने के बाद ऐसा लगता है कि इसमें यहूदियों और ईसाइयों को ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने के लिए लड़ाई का आदेश है। लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है क्योंकि इस्लाम में किसी भी प्रकार की ज़बरदस्ती की इजाज़त नहीं है।

क़ुरआन में अल्लाह मना करता है कि किसी को ज़बरदस्ती मुसलमान बनाया जाए। देखिए :

> ''ऐ पैग़म्बर ! अगर ये लोग तुमसे झगड़ने लगें, तो कहना कि मैं और मेरी पैरवी करने वाले तो ख़ुदा के फ़रमांबरदार हो चुके और 'अहले-किताब' और अनपढ़ लोगों से कहो कि क्या तुम भी (ख़ुदा के फ़रमांबरदार बनते और) इस्लाम लाते हो? अगर ये लोग इस्लाम ले आयें तो बेशक हिदायत पा लें और अगर (तुम्हारा कहा) न मानें, तो तुम्हारा काम सिर्फ़ ख़ुदा का पैग़ाम पहुँचा देना है। और ख़ुदा (अपने) बन्दों को देख रहा है।'' (क़ुरआन, सूरा-3, आयत- 20)
>
> ''और अगर तुम्हारा परवरदिगार [यानी अल्लाह] चाहता, तो जितने लोग ज़मीन पर हैं, सब के सब ईमान ले आते, तो क्या तुम लोगों पर ज़बरदस्ती करना चाहते हो कि वे मोमिन [यानी मुसलमान] हो जाएं।'' (क़ुरआन, सूरा-10, आयत- 99)

इस्लाम के प्रचार-प्रसार में किसी तरह की ज़ोर-ज़बरदस्ती न करने की इन आयतों के बावजूद इस आयत में 'किताबवालों' से लड़ने का फ़रमान आने के कारण वही हैं, जो पैम्फ़लेट में लिखी 8वें, 9वें व 20वें क्रम की आयतों के लिए मैंने दिए हैं। आयत में जिज़या नाम का टैक्स ग़ैरमुसलमानों से उनकी जान-माल की रक्षा के बदले लिया जाता था। इसके अलावा उन्हें कोई टैक्स नहीं देना पड़ता था। जबकि मुसलमानों के लिए भी ज़कात देना ज़रूरी था। आज तो सरकार ने बात-बात पर टैक्स लगा रखा है।

पैम्फ़लेट में लिखी 22वें क्रम की आयत है :

''------फिर हमने उनके बीच 'क़ियामत' के दिन तक के लिए वैमनस्य और द्वेष की आग भड़का दी, और अल्लाह जल्द उन्हें बता देगा जो कुछ वे करते रहे हैं।'' (क़ुरआन, सूरा-5, आयत- 14)

कपटपूर्ण उद्देश्य के लिए पैम्फ़लेट में यह आयत भी जान-बूझकर अधूरी दी गई है। पूरी आयत है :

''और जो लोग (अपने को) कहते हैं कि हम नसारा [यानी ईसाई] हैं, हमने उनसे भी अह्द [यानी वचन] लिया था, मगर उन्होंने भी उस नसीहत का, जो उनको की गई थी, एक हिस्सा भुला दिया, तो हमने उनके आपस में 'क़ियामत' तक के लिए दुश्मनी और कीना [द्वेष] डाल दिया, और जो कुछ वे करते रहे खुदा बहुत जल्द उनको उससे आगाह करेगा।'' (क़ुरआन, सूरा-5, आयत- 14)

पूरी आयत पढ़ने से स्पष्ट है कि वादा ख़िलाफ़ी, चालाकी और फ़रेब के विरुद्ध यह आयत उतरी, न कि झगड़ा कराने के लिए।

पैम्फ़लेट में लिखी 23वें क्रम की आयत है :

''वे चाहते हैं कि जिस तरह से वे 'काफ़िर' हुए हैं उसी तरह से तुम भी 'काफ़िर' हो जाओ, फिर तुम एक जैसे हो जाओ; तो उनमें से किसी को अपना साथी न बनाना जब तक वे अल्लाह की राह में हिजरत न करें, और यदि वे इससे फिर जावें तो उन्हें जहां कहीं पाओ पकड़ो और उनका वध (क़त्ल) करो। और उनमें से किसी को साथी और सहायक मत बनाना।'' (क़ुरआन, सूरा-4, आयत- 89)

इस आयत को इसके पहले वाली 88वीं आयत के साथ मिलाकर पढ़ें, जो निम्न है :

''तो क्या वजह है कि तुम मुनाफ़िक़ों के बारे में दो गिरोह [यानी दो भाग] हो रहे हो? हाल यह है कि ख़ुदा ने उनके करतूतों की वजह से औंधा कर दिया है। क्या तुम चाहते हो कि जिस शख़्स को ख़ुदा ने गुमराह कर दिया है, उसको रास्ते पर ले आओ?''

(क़ुरआन, सूरा-4, आयत- 88)

स्पष्ट है कि इससे आगे वाली 89वीं आयत, जो पर्चे में दी है, उन मुनाफ़िकों (यानी कपटाचारियों) के सन्दर्भ में है, जो मुसलमानों के पास आकर कहते हैं कि हम 'ईमान' ले आए और मुसलमान बन गए और मक्का में काफ़िरों के पास जाकर कहते कि हम अपने बाप-दादा के धर्म में ही हैं, बुतों को पूजने वाले।

हम तो मुसलमानों के बीच भेद लेने जाते हैं, जिसे हम आप को बताते हैं। ये मुसलमानों के बीच बैठकर उन्हें अपने बाप-दादा के धर्म 'बुत-पूजा' पर वापस लौटने को भी कहते।

इसी लिए यह आयत उतरी कि इन कपटाचारियों को दोस्त न बनाना क्योंकि यह दोस्त हैं ही नहीं, तथा इनकी सच्चाई की परीक्षा लेने के लिए इनसे कहो कि तुम भी मेरी तरह वतन छोड़कर हिजरत करो अगर सच्चे हो तो। यदि न करें तो समझो कि ये नुक़सान पहुँचाने वाले कपटाचारी जासूस हैं, जो काफ़िर दुश्मनों से अधिक ख़तरनाक हैं। उस समय युद्ध का माहौल था, युद्ध के दिनों में सुरक्षा की दृष्टि से ऐसे जासूस बहुत ही ख़तरनाक हो सकते थे, जिनकी एक ही सज़ा हो सकती थी; मौत। उनकी सन्दिग्ध गतिविधियों के कारण ही मना किया गया है कि उन्हें न तो अपना साथी बनाओ और न ही मददगार, क्योंकि ऐसा करने पर धोखा ही धोखा है।

यह आयत मुसलमानों की आत्मरक्षा के लिए उतरी न कि झगड़ा कराने या घृणा फैलाने के लिए।

पैम्फ़लेट में लिखी 24वें क्रम की आयत है :

> ''उन (काफ़िरों) से लड़ो! अल्लाह तुम्हारे हाथों उन्हें यातना देगा, और उन्हें रुसवा करेगा और उनके मुक़ाबले में तुम्हारी सहायता करेगा, और 'ईमान' वालों के दिल ठंडे करेगा।''
>
> (क़ुरआन, सूरा-9, आयत-14)

पैम्फ़लेट में लिखी पहले क्रम की आयत में हम विस्तार से बता चुके हैं कि कैसे शान्ति का समझौता तोड़कर हमला करनेवालों के विरुद्ध सूरा-9 की ये आयतें उतरीं। पैम्फ़लेट में 24वें क्रम में लिखी आयत इसी सूरा की है जिसमें समझौता तोड़ हमला करनेवाले अत्याचारियों से लड़ने और उन्हें दण्डित करने का अल्लाह का आदेश है जिससे झगड़ा-फ़साद करनेवालों के हौसले पस्त हों

और शान्ति की स्थापना हो। इसे और स्पष्ट करने के लिए क़ुरआन मजीद की सूरा-9 की इस 14वीं आयत के पहले वाली दो आयतें देखें :

''और अगर अह्द [यानी समझौता] करने के बाद अपनी क़समों को तोड़ डालें और तुम्हारे दीन में ताने करने लगें, तो उन कुफ़्र के पेशवाओं से जंग करो, (ये बे-ईमान लोग हैं और) इनकी क़समों का कुछ ऐतबार नहीं है। अजब नहीं कि (अपनी हरकतों से) बाज़ आ जाएँ।'' (क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 12)

''भला तुम ऐसे लोगों से क्यों न लड़ो, जिन्होंने अपनी क़समों को तोड़ डाला और (ख़ुदा के) पैग़म्बर के निकालने का पक्का इरादा कर लिया और उन्होंने तुमसे (किया गया अह्द तोड़ना) शुरू किया। क्या तुम ऐसे लोगों से डरते हो, हालाँकि डरने के लायक़ ख़ुदा है, बशर्ते कि ईमान रखते हो।'' (क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 13)

अत: शान्ति स्थापना के उद्‌देश्य से उतरी सूरा-9 की इन आयतों को शान्ति भंग करनेवाली या झगड़ा-फ़साद करानेवाली कहनेवाले या तो धूर्त हैं अथवा अज्ञानी।

निष्कर्ष : 40 वर्ष की उम्र में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को अल्लाह से सत्य का सन्देश मिलने के बाद से अन्तिम समय (यानी 23 वर्षों) तक अत्याचारी काफ़िरों ने मुहम्मद (सल्ल०) को चैन से बैठने नहीं दिया। इस बीच लगातार युद्ध और साज़िशों का माहौल रहा।

ऐसी परिस्थितियों में आत्मरक्षा के लिए दुश्मनों से सावधान रहना, माहौल गन्दा करनेवाले मुनाफ़िक़ों (यानी कपटाचारियों) और अत्याचारियों का दमन करना या उनपर सख़्ती करना या उन्हें दण्डित करना एक आवश्यकता ही नहीं, कर्त्तव्य था।

ऐसे दुष्टों, अत्याचारियों और कपटाचारियों के लिए ऋग्वेद में परमेश्वर का आदेश है :

मायाभिरिन्द्र मायिनं त्वं शुष्णमवातिर:।

विदुष्टे तस्य मेधिरास्तेषां श्रवांस्युत्तिर ॥

(ऋग्वेद, मण्डल 1, सूक्त 11, मंत्र 7)

भावार्थ : बुद्धिमान मनुष्यों को ईश्वर आज्ञा देता है कि साम, दाम, दण्ड और भेद की युक्ति से दुष्ट और शत्रु जनों की निवृत्ति करके विद्या और चक्रवती राज्य की यथावत् उन्नति करनी चाहिए तथा जैसे इस संसार में कपटी, छली और दुष्ट पुरुष वृद्धि को प्राप्त न हों, वैसा उपाय निरन्तर करना चाहिए। (हिन्दी भाष्य महर्षि दयानन्द)

अतः पैम्फ़लेट में दी गई 24 आयतें अल्लाह के वे फ़रमान हैं, जिनसे मुसलमान अपनी व एकेश्वरवादी सत्य धर्म इस्लाम की रक्षा कर सकें। वास्तव में ये आयतें व्यावहारिक सत्य हैं। लेकिन अपने राजनीतिक फ़ायदे के लिए क़ुरआन मजीद की इन आयतों की ग़लत व्याख्या कर और उन्हें जनता के बीच बंटवाकर कुछ स्वार्थी लोग, मुसलमानों व विभिन्न धर्मावलम्बियों के बीच क्या लड़ाई-झगड़ा कराने व घृणा फैलाने का बीज नहीं बो रहे? क्या यह सुनियोजित तरीक़े से जनता को बहकाना व वरग़लाना नहीं है?

1986 में छपे इस पर्चे को अदालत के फ़ैसले की आड़ लेकर आख़िर किस मक़सद से छपवाया और बंटवाया जा रहा है?

जनता ऐसे लोगों से सावधान रहे, जो अपने राजनीतिक फ़ायदे के लिए इस तरह के कार्यों से देश में अशान्ति फैलाना चाहते हैं।

ऐसे लोग क्या नहीं जानते कि दूसरों से सम्मान पाने के लिए पहले खुद दूसरों का सम्मान करना चाहिए।

ऐसे लोगों को चाहिए कि वे पहले शुद्ध मन से क़ुरआन को अच्छी तरह पढ़ लें और इस्लाम को जान लें, फिर इसके बाद ही इस्लाम पर टिप्पणी करें, अन्यथा नहीं।

हो सकता है इस पर्चे को छापने व बाँटने वाले भी मेरी तरह ही अनजाने में भ्रम में हों, यदि ऐसा है, तो अब सच्चाई जानने के बाद कई भाषाओं में छपनेवाले इस पर्चे को छपवाना-बंटवाना बन्द करें और अपने किए के लिए प्रायश्चित कर सार्वजनिक रूप से माफ़ी मांगें।

यहाँ एक घटना का उल्लेख करना बहुत ज़रूरी है। कुछ दिनों पहले 'वैदिक धर्म और इस्लाम' विषय पर कानपुर में आयोजित एक सेमिनार में मेरे

व्याख्यान देने के बाद आर्यसमाजी एक सज्जन ने मुझसे पूछा कि ''स्वामी जी, आपने अभी इस्लाम के बारे बताया कि इस्लाम और वेदों के सत्य में आश्चर्यजनक रूप से समानता है। आपके बताए तर्कों से तो यही लगता है। फिर यह बताइए कि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखे गए सत्यार्थप्रकाश[1] का 14 वाँ समुल्लास क्या ग़लत है?'' यह एक ऐसा प्रश्न है जो उन लोगों के मन में स्वाभाविक रूप से आएगा जिन्होंने सत्यार्थप्रकाश को पढ़ा है।

इसका उत्तर है- जैसा कि मैं अपने बारे में लिख चुका हूँ कि क़ुरआन की आयतों का सही मतलब जानने के लिए यह जानना ज़रूरी है कि आयत क्यों उतरी और किन परिस्थितियों में उतरी? साथ ही क़ुरआन को समझने के लिए व्यक्ति के मन में इस्लाम के प्रति सकारात्मक (Positive) दृष्टिकोण भी होना चाहिए यानी मन शुद्ध होना चाहिए। क्योंकि ईश्वरीय किताबें बहुत रहस्यमयी होती हैं। उन्हें समझना आसान बात नहीं। वेदों को ही ले लीजिए वैदिक मंत्रों का सही अर्थ करना अत्यन्त कठिन काम है। मंत्रों का अर्थ करते समय लोगों की जैसी मानसिकता होगी वह मंत्रों के अर्थ को समझने में प्रभावित कर देती है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती बहुत बड़े विद्वान थे लेकिन स्वामी जी अरबी भाषा नहीं जानते थे। स्वामी जी ने मेरी ही तरह इस्लाम के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हुए क़ुरआन का सीधा-सीधा अनुवाद देखा या सुना। यह नहीं देखा कि आयत क्यों उतरी और किन परिस्थितियों में उतरी व आयत का मक़सद क्या है? तथा आयत किस सन्दर्भ में है? इसी लिए मेरी ही तरह क़ुरआन को लेकर वे भ्रमित हो गए और उसके प्रति ग़लत धारणा बना ली। स्वामी जी बड़े ही विद्वान थे ग़लती उनसे नहीं हुई, बल्कि उससे हुई जिसने स्वामी जी को क़ुरआन ठीक से समझाया नहीं या क़ुरआन की आयतों को ठीक से समझने का तरीक़ा नहीं बताया। यदि स्वामी जी ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की जीवनी और उनके कथन यानी हदीसें पढ़ी होतीं तो निश्चित रूप से वे क़ुरआन के बारे में वही कहते या लिखते जो मैं आज कह रहा हूँ या लिख रहा हूँ।

---

1. स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपनी लिखी एक किताब 'सत्यार्थप्रकाश' में मुख्य धर्मों व मतों की समीक्षा की है। इस किताब के 14वें समुल्लास (यानी अध्याय) में इस्लाम के बारे में ग़लत और भ्रामक जानकारी दी गई है।

क़ुरआन के आदर्श

मैंने अनुभव किया है कि ईश्वरीय ज्ञानवाली रहस्यमयी किताबें पढ़ने व समझने के लिए तन के साथ-साथ मन की शुद्धता भी ज़रूरी है तभी उनका रहस्य समझ में आता है।

इसी शुद्धता के साथ जब मैंने ईश्वरीय किताब क़ुरआन मजीद पढ़ी तो अल्लाह की रहस्मयी आयतों के सच्चे अर्थ समझ में आने लगे। अल्लाह की ओर से भेजी गई किताब क़ुरआन मानवता के कल्याण के लिए आसमान से उतरी जिसमें मानवता के लिए आदर्श ही आदर्श हैं।

क़ुरआन मजीद की प्रथम सूरा फ़ातिहा ईश-वन्दना है जिसको पढ़ने के बाद मन अपने आप एक अल्लाह (यानी परमेश्वर) की सर्वोच्चता को स्वीकार कर लेता है और वह उस अल्लाह के प्रति आस्था तथा भक्ति से पूर्ण हो जाता है। मन की शुद्धता व आस्तिक भाव से पाठक स्वयं पढ़कर देखें :

'शुरू अल्लाह का नाम लेकर, जो बड़ा मेहरबान, निहायत रहमवाला है।'

''सब तरह की तारीफ़ ख़ुदा ही के लिए है जो तमाम [यानी सम्पूर्ण] मख़्लूक़ात [यानी प्राणियों] का परवरदिगार [यानी पालनहार] है। बड़ा मेहरबान, निहायत रहम वाला, इंसाफ़ के दिन का हाकिम, (ऐ परवरदिगार!) हम तेरी ही इबादत करते हैं, और तुझी से मदद माँगते हैं, हमको सीधे रास्ते पर चला, उन लोगों का रास्ता जिन पर तू अपना फ़ज़्ल व करम करता रहा, न उनका जिन पर ग़ुस्सा होता रहा और न गुमराहों का। (क़ुरआन, सूरा-1, आयत- 1-7)

क़ुरआन के आध्यात्मिक आदर्श

''सुन रखो कि जो मख़्लूक़ [यानी प्राणी] आसमानों में है और जो लोग ज़मीन में हैं, सब ख़ुदा ही के (बन्दे और उसकी मख़्लूक़) हैं, और यह जो ख़ुदा के सिवा (अपने बनाए हुए) शरीकों को पुकारते

हैं, वे (किसी और चीज़ के) पीछे नहीं चलते, सिर्फ़ ज़न [गुमान] के पीछे चलते हैं और सिर्फ़ अटकलें दौड़ा रहे हैं।''

(क़ुरआन, सूरा-10, आयत- 66)

''(ऐ पैग़म्बर!) कह दो कि लोगो! अगर तुमको मेरे दीन में किसी तरह का शक हो तो (सुन रखो कि) जिन लोगों की तुम ख़ुदा के सिवा इबादत करते हो, मैं उनकी इबादत नहीं करता बल्कि मैं ख़ुदा की इबादत करता हूँ जो तुम्हारी रूहें क़ब्ज़ कर लेता है और मुझको यही हुक्म हुआ है कि ईमान लानेवालों में हूँ।''

(क़ुरआन, सूरा-10, आयत-104)

''और ख़ुदा को छोड़कर ऐसी चीज़ को न पुकारना जो न तुम्हारा कुछ भला कर सके और न कुछ बिगाड़ सके। अगर ऐसा करोगे तो ज़ालिमों में हो जाओगे।'' (क़ुरआन, सूरा-10, आयत- 106)

''कहो, क्या मैं ख़ुदा को छोड़कर किसी और को मददगार बनाऊं कि (वही तो) आसमानों और ज़मीन का पैदा करनेवाला है और वही (सबको) खाना देता है और ख़ुद किसी से खाना नहीं लेता। (यह भी) कह दो कि मुझे यह हुक्म हुआ है कि मैं सबसे पहले इस्लाम लानेवाला हूँ और यह कि तुम (ऐ पैग़म्बर!) मुश्रिकों में न होना।''

(क़ुरआन, सूरा-6, आयत- 14)

''और जिनको तुम ख़ुदा के सिवा पुकारते हो, वे न तुम्हारी मदद की ताक़त रखते हैं और न ख़ुद अपनी ही मदद कर सकते हैं।''

(क़ुरआन, सूरा-7, आयत- 197)

''और अगर तुम उनको सीधे रास्ते की तरफ़ बुलाओ, तो सुन न सकें और तुम उन्हें देखते हो कि (देखने में) आँखें खोले तुम्हारी तरफ़ देख रहे हैं, मगर (सच में) कुछ नहीं देखते।''

(क़ुरआन, सूरा-7, आयत- 198)

''(उनसे) पूछो कि तुमको आसमान व ज़मीन में रोज़ी कौन देता है या (तुम्हारे) कानों व आँखों का मालिक कौन है और बे-जान से जानदार कौन पैदा करता है और जानदार से बे-जान कौन पैदा करता है और दुनिया के कामों का इन्तिज़ाम कौन करता है। झट कह देंगे कि

अल्लाह। तो कहो कि फिर तुम (ख़ुदा से) डरते क्यों नहीं?

यही ख़ुदा तो तुम्हारा परवरदिगारे-बर-हक़ है और हक़ बात के ज़ाहिर होने के बाद गुमराही के सिवा है ही क्या? तो तुम कहाँ फिर जाते हो?'' (क़ुरआन, सूरा-10, आयत- 31, 32)

''(उनसे) पूछो कि भला तुम्हारे शरीकों में कोई ऐसा है कि मख़लूक़ात को पहले पैदा करे (और) फिर उसको दोबारा बनाए। कह दो कि ख़ुदा ही पहली बार पैदा करता है, फिर वही उसको दोबारा पैदा करेगा तो तुम कहाँ उलटे जा रहे हो?

पूछो कि भला तुम्हारे शरीकों में कौन ऐसा है कि हक़ का रास्ता दिखाए। कह दो कि ख़ुदा ही हक़ का रास्ता दिखाता है, भला जो हक़ का रास्ता दिखाए, वह इस क़ाबिल है कि उसकी पैरवी की जाए या वह कि जब तक कोई उसे रास्ता न बताए, रास्ता न पाए। तो तुम को क्या हुआ है, कैसा इंसाफ़ करते हो?''

(क़ुरआन, सूरा-10, आयत- 34, 35)

''और मुश्रिक कहते हैं कि अगर ख़ुदा चाहता तो न हम ही उसके सिवा किसी चीज़ को पूजते और न हमारे बड़े ही (पूजते) और न उसके (फ़रमान के) बग़ैर हम किसी चीज़ को हराम ठहराते। (ऐ पैग़म्बर!) इसी तरह इनसे अगले लोगों ने किया था, तो पैग़म्बरों के ज़िम्मे (ख़ुदा के हुक्मों को) खोलकर पहुँचा देने के सिवा और कुछ नहीं।

और हमने हर जमाअत में पैग़म्बर भेजा कि ख़ुदा ही की इबादत करो और बुतों (की पूजा करने) से बचो, तो उनमें कुछ ऐसे हैं जिनको ख़ुदा ने हिदायत दी और कुछ ऐसे हैं, जिनपर गुमराही साबित हुई, सो ज़मीन पर चल-फिर कर देख लो कि झुठलाने वालों का अंजाम कैसा हुआ।'' (क़ुरआन, सूरा-16, आयत- 35, 36)

''बात यह है कि हमने उनके पास हक़ पहुँचा दिया है और ये (जो बुतपरस्ती किए जाते हैं) बेशक झूठे हैं।

ख़ुदा ने न तो किसी को (अपना) बेटा बनाया है और न उसके साथ कोई और माबूद [पूज्य] है।''

(क़ुरआन, सूरा-23, आयत- 90, 91)

''कह दो कि मैं तो अपने परवरदिगार ही की इबादत करता हूँ और यह भी कह दो कि मैं तुम्हारे हक़ में नुक़सान और नफ़े का कुछ इख़्तियार नहीं रखता।

यह भी कह दो कि ख़ुदा (के अज़ाब) से मुझे कोई पनाह नहीं दे सकता और मैं उसके सिवा कहीं पनाह की जगह नहीं देखता।

हाँ, ख़ुदा की (तरफ़ से हुक्मों का) और उसके पैग़ामों का पहुँचा देना (ही मेरे ज़िम्मे है) और जो शख़्स ख़ुदा और उसके पैग़म्बर की नाफ़रमानी करेगा तो ऐसों के लिए जहन्नम की आग है, हमेशा-हमेशा उसमें रहेंगे।'' (क़ुरआन, सूरा-72, आयत- 20-23)

''(ऐ पैग़म्बर! इस्लाम के इन मुन्किरों [नास्तिकों] से) कह दो कि ऐ काफ़िरो! जिन (बुतों) को तुम पूजते हो, उनको मैं नहीं पूजता, और जिस (ख़ुदा) की मैं इबादत करता हूँ, उसकी तुम इबादत नहीं करते, और (मैं फिर कहता हूँ कि) जिनकी तुम पूजा करते हो, उनकी मैं पूजा करनेवाला नहीं हूँ। और न तुम उसकी बन्दगी करनेवाले (मालूम होते) हो, जिसकी मैं बन्दगी करता हूँ। तुम अपने दीन [धर्म] पर, मैं अपने दीन पर।'' (क़ुरआन, सूरा-109, आयत- 1-6)

''कहो कि वह (ज़ात पाक जिस का नाम) अल्लाह (है) एक है, (वह) माबूदे-बरहक़, बे-नियाज़ है। न किसी का बाप है और न किसी का बेटा, और कोई उसका हमसर (साथी) नहीं।''

(क़ुरआन, सूरा-112, आयत- 1-4)

''और जिन लोगों ने हमारी आयतों को झुठलाया, वे बहरे और गूँगे हैं। (इसके अलावा) अँधेरे में (पड़े हुए), जिसको ख़ुदा चाहे, गुमराह कर दे और जिसे चाहे सीधे रास्ते पर चला दे।

कहो, (काफ़िरो!) भला देखो तो, अगर तुमपर ख़ुदा का अज़ाब आ जाए या क़ियामत आ मौजूद हो, तो क्या तुम (ऐसी हालत में) ख़ुदा

[यानी परमेश्वर] के सिवा किसी और को पुकारोगे? अगर सच्चे हो (तो बताओ)।

(नहीं) बल्कि (मुसीबत के वक़्त तुम) उसी को पुकारते हो, तो जिस दुःख के लिए उसे पुकारते हो, वह अगर चाहता है, तो उसको दूर कर देता है और जिनको तुम शरीक बनाते हो, (उस वक़्त) उन्हें भूल जाते हो।

और हमने तुमसे पहले बहुत-सी उम्मतों की तरफ़ पैग़म्बर भेजे, फिर (उनकी नाफ़रमानियों की वजह से) हम उन्हें सख़्तियों और तक्लीफ़ों में पकड़ते रहे, ताकि आजिज़ी करें।''

(क़ुरआन, सूरा-6, आयत- 39-42)

''(ऐ पैग़म्बर! कुफ़्फ़ार से) कह दो कि जिनको तुम ख़ुदा के सिवा पुकारते हो, मुझे उनकी इबादत से मना किया गया है। (यह भी) कह दो कि मैं तुम्हारी ख़्वाहिशों की पैरवी नहीं करूंगा, ऐसा करूं, तो गुमराह हो जाऊं और हिदायत पाए हुए लोगों में न रहूँ।''

(क़ुरआन, सूरा-6, आयत- 56)

''कहो, क्या हम ख़ुदा के सिवा ऐसी चीज़ को पुकारें जो न हमारा भला कर सके न बुरा और जब हमको ख़ुदा ने सीधा रास्ता दिखा दिया, तो (क्या) हम उल्टे पाँव फिर जाएं? (फिर हमारी ऐसी मिसाल हो) जिसे किसी जिन्नात [शैतान] ने जंगल में भुला दिया हो (और वह) हैरान (हो रहा हो) और उसके कुछ साथी हों जो उसको रास्ते की तरफ़ बुलाएं कि हमारे पास चला आ। कह दो कि रास्ता तो वही है, जो ख़ुदा ने बताया है और हमें तो यह हुक्म मिला है कि हम अल्लाह, रब्बुल-आलमीन के फ़रमांबरदार हों।''

(क़ुरआन, सूरा-6, आयत- 71)

''(ऐ मुहम्मद!) इनसे कह दो कि मुझे इस बात से मना किया गया है कि जिनको तुम ख़ुदा के सिवा पुकारते हो, उनकी इबादत करूँ (और मैं उनकी कैसे इबादत करूँ,) जबकि मेरे पास मेरे परवरदिगार (की तरफ़) से खुली दलीलें आ चुकी हैं और मुझको यह हुक्म हुआ है कि सारे जहान के परवरदिगार ही के फ़रमान के ताबेअ हूँ।''

(क़ुरआन, सूरा-40, आयत- 66)

''वही तो है, जिसने तुमको (पहले) मिट्टी से पैदा किया, फिर नुत्फ़ा बनाकर, फिर लोथड़ा बनाकर, फिर तुमको निकालता है (कि तुम) बच्चे (होते हो,) फिर तुम अपनी जवानी को पहुँचते हो, फिर बूढ़े हो जाते हो और कोई तुममें से पहले ही मर जाता है और तुम (मौत के) मुक़र्रर वक़्त तक पहुँच जाते हो, और ताकि तुम समझो।''

(क़ुरआन, सूरा-40, आयत- 67)

''(ऐ मुहम्मद!) कह दो कि लोगो! मैं तुम सबकी तरफ़ ख़ुदा का भेजा हुआ (यानी उसका रसूल) हूँ। (वह) जो आसमानों और ज़मीन का बादशाह है, उसके सिवा कोई माबूद [यानी पूज्य] नहीं। वही ज़िन्दगी बख़्शता और वही मौत देता है, तो ख़ुदा पर और उसके रसूल पैग़म्बर उम्मी पर, जो ख़ुदा पर और उसके तमाम कलाम पर ईमान रखते हैं, ईमान लाओ और उनकी पैरवी करो, ताकि हिदायत पाओ।'' (क़ुरआन, सूरा-7, आयत- 158)

''और (ऐ पैग़म्बर!) तुमको जो हुक्म भेजा जाता है, उसकी पैरवी किए जाओ और (तक्लीफ़ों पर) सब्र करो, यहाँ तक कि ख़ुदा फ़ैसला कर दे। वह सबसे बेहतर फ़ैसला करनेवाला है।''

(क़ुरआन, सूरा-10, आयत- 109)

''कह दो कि जो लोग ख़ुदा पर झूठ बुहतान बाँधते हैं, फ़लाह (कामियाबी) नहीं पाएंगे।

उनके लिए जो फ़ायदे हैं, दुनिया में (हैं), फिर उनको हमारी ही तरफ़ लौटकर आना है। उस वक़्त हम उनको कड़े अज़ाब (के मज़े) चखाएंगे, क्योंकि कुफ़्र (की बातें) किया करते थे।''

(क़ुरआन, सूरा-10, आयत- 69, 70)

''(ऐ पैग़म्बर!) ये उन (हिदायतों) में से हैं जो ख़ुदा ने हिक्मत की बातें तुम्हारी तरफ़ वह्य की हैं और ख़ुदा के साथ कोई और माबूद न बनाना कि (ऐसा करने से) मलामत किया हुआ और (ख़ुदा की दरगाह से) धुत्कारा हुआ बनाकर जहन्नम में डाल दिए जाओगे।''

(क़ुरआन, सूरा-17, आयत- 39)

‘‘और कह दो कि (लोगो!) यह क़ुरआन तुम्हारे परवरदिगार की तरफ़ से हक़ (पर) है, तो जो चाहे ईमान लाए और जो चाहे काफ़िर रहे। हमने ज़ालिमों के लिए (दोज़ख़ की) आग तैयार कर रखी है, जिसकी क़नातें उन को घेर रही होंगी और अगर फ़रियाद करेंगे, तो ऐसे खौलते हुए पानी से, उनकी दादरसी की जाएगी जो पिघले हुए ताँबे की तरह (गर्म होगा और जो) मुँहों को भून डालेगा। (उनके पीने का) पानी भी बुरा और आरामगाह भी बुरी।

(और) जो ईमान लाए और काम भी नेक करते रहे, तो हम नेक काम करनेवालों का बदला बर्बाद नहीं करते।

ऐसे लोगों के लिए हमेशा रहने के बाग़ हैं, जिनमें उनके (महलों के) नीचे नहरें बह रही हैं। उनको वहाँ सोने के कंगन पहनाए जाएँगे और वे बारीक दीबा और अतलस के हरे कपड़े पहना करेंगे (और) तख़्तों पर तकिए लगाकर बैठा करेंगे। (क्या) ख़ूब बदला और (क्या) ख़ूब आरामगाह है।’’ (क़ुरआन, सूरा-18, आयत- 29-31)

‘‘और जो आदमी उनमें से यह कहे कि खुदा के सिवा मैं माबूद [पूज्य] हूँ तो उसे हम दोज़ख़ की सज़ा देंगे और ज़ालिमों को हम ऐसी ही सज़ा दिया करते हैं।’’ (क़ुरआन, सूरा-21, आयत- 29)

‘‘और (ऐ मुहम्मद!) हमने तुमको तमाम [सम्पूर्ण] दुनिया के लिए रहमत बनाकर भेजा है।

कह दो कि मुझपर (खुदा की तरफ़ से) यह वह्य [प्रकाशना] आती है कि तुम सबका माबूद [यानी पूज्य] एक ख़ुदा है, तो तुमको चाहिए कि फ़रमांबरदार हो जाओ।’’

(क़ुरआन, सूरा-21, आयत- 107, 108)

‘‘जो ख़ुदा से इल्तिजा [प्रार्थना] करते हैं कि ऐ परवरदिगार! हम ईमान ले आए, सो हमको हमारे गुनाहों को माफ़ फ़रमा और दोज़ख़ के अज़ाब से बचा।

ये वे लोग हैं जो (कठिनाइयों में) सब्र करते और सच बोलते और इबादत में लगे रहते और (ख़ुदा की) राह में ख़र्च करते और सेहर [यानी भोर] के वक़्तों में गुनाहों की माफ़ी माँगा करते हैं।

ख़ुदा तो इस बात की गवाही देता है कि उसके सिवा कोई माबूद [यानी पूज्य] नहीं और फ़रिश्ते और इल्मवाले लोग, जो इंसाफ़ पर क़ायम हैं, ये भी (गवाही देते हैं कि) उस ग़ालिब हिक्मतवाले के सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं।''

(क़ुरआन, सूरा-3, आयत- 16-18)

''किसी चीज़ को ख़ुदा का शरीक न बनाना और माँ-बाप से (बद-सुलूकी न करना, बल्कि) [अच्छा] सुलूक करते रहना और नादारी [निर्धनता] (के ख़तरे) से अपनी औलाद को क़त्ल न करना, क्योंकि तुमको और उनको हमीं रोज़ी देते हैं और बे-हयाई के काम ज़ाहिर हों या छिपे हुए, उनके पास न फटकना। और किसी जान (वाले) को जिसके क़त्ल को ख़ुदा ने हराम कर दिया है, क़त्ल न करना, मगर जायज़ तौर पर (यानी) जिसका शरीअत हुक्म दे। इन बातों की वह तुम्हें ताकीद फ़रमाता है, ताकि तुम समझो।''

(क़ुरआन, सूरा-6, आयत- 151)

''और ऐसे लोगों की तौबा क़बूल नहीं होती जो (सारी उम्र) बुरे काम करते रहे, यहाँ तक कि जब उनमें से किसी की मौत आ मौजूद हो तो उस वक़्त कहने लगे कि अब मैं तौबा करता हूँ और न उनकी (तौबा क़बूल होती है) जो कुफ़्र की हालत में मरें। ऐसे लोगों के लिए हमने दर्दनाक अज़ाब तैयार कर रखा है।''

(क़ुरआन, सूरा-4, आयत- 18)

मानवता की भलाई के लिए अनुकरणीय श्रेष्ठ सदाचार है, इस्लाम में :

''इस (क़त्ल) की वजह से हमने बनी इस्राईल पर यह हुक्म नाज़िल किया कि जो शख़्स किसी को (ना-हक़) क़त्ल करेगा (यानी) बग़ैर इसके कि जान का बदला जान लिया जाए या मुल्क में ख़राबी पैदा करने की सज़ा दी जाए, उसने गोया तमाम लोगों को क़त्ल किया और जो उसकी ज़िन्दगी की वजह बना, तो गोया तमाम लोगों की ज़िन्दगी की वजह बना और उन लोगों के पास हमारे पैग़म्बर रोशन दलीलें ला चुके हैं। फिर इसके बाद भी इनमें बहुत-से लोग मुल्क में

एतदाल [न्याय] की हद से निकल जाते हैं।''

(क़ुरआन, सूरा-5, आयत-32)

''मोमिनो! अपने घरों के सिवा दूसरे (लोगों के) घरों में घरवालों से इजाज़त लिए और उनको सलाम किए बग़ैर दाख़िल न हुआ करो, यह तुम्हारे हक़ में बेहतर है (और हम यह नसीहत इसलिए करते हैं कि) शायद तुम याद रखो।'' (क़ुरआन, सूरा-24, आयत- 27)

''और अपनी क़ौम की बेवा [विधवा] औरतों के निकाह कर दिया करो और अपने ग़ुलामों और लौंडियों के भी जो नेक हों (निकाह कर दिया करो) और वे ग़रीब होंगे तो ख़ुदा उनको अपने फ़ज़्ल से ख़ुशहाल कर देगा और ख़ुदा (बहुत) वुसूअत वाला [समाईवाला] और (सब कुछ) जानने वाला है।''

(क़ुरआन, सूरा-24, आयत- 32)

''और अगर मोमिनों में से कोई दो फ़रीक़ आपस में लड़ पड़ें; तो उनमें सुलह करा दो। और अगर एक फ़रीक़ दूसरे पर ज़्यादती करे तो ज़्यादती करनेवाले से लड़ो यहाँ तक कि वह ख़ुदा के हुक्म की तरफ़ रुजू हो जाए। तो जब वह रुजू हो जाए तो दोनों फ़रीक़ों में बराबरी के साथ सुलह करा दो और इंसाफ़ से काम लो कि ख़ुदा इंसाफ़ करनेवालों को पसन्द करता है।

मोमिन तो आपस में भाई-भाई हैं, तो अपने दो भाइयों में सुलह करा दिया करो। और ख़ुदा से डरते रहो, ताकि तुम पर रहमत की जाए। मोमिनो! कोई क़ौम किसी क़ौम का मज़ाक़ न उड़ाए। मुम्किन है कि वे लोग उनसे बेहतर हों और न औरतें औरतों का (मज़ाक़ उड़ाएं) मुम्किन है कि वे उनसे अच्छी हों और अपने (मोमिन भाई) को ऐब न लगाओ और न एक दूसरे का बुरा नाम रखो। ईमान लाने के बाद बुरा नाम (रखना) गुनाह है। और जो तौबा न करें, वे ज़ालिम हैं।

ऐ ईमानवालो! बहुत गुमान करने से बचो कि कुछ गुमान गुनाह हैं और एक-दूसरे के हाल की टोह में न रहा करो और न कोई किसी की ग़ीबत करे। क्या तुममें से कोई इस बात को पसन्द करेगा कि अपने मरे हुए भाई का गोश्त खाए? इससे तो तुम ज़रूर नफ़रत करोगे, (तो

ग़ीबत न करो) और ख़ुदा का डर रखो। बेशक ख़ुदा तौबा क़बूल करनेवाला मेहरबान है।'' (क़ुरआन, सूरा-49, आयत- 9-12)

''मोमिनो! जब जुमा [यानी शुक्रवार] के दिन नमाज़ के लिए अज़ान दी जाए, तो ख़ुदा की याद (यानी नमाज़) के लिए जल्दी करो और (ख़रीदना व) बेचना छोड़ दो। अगर समझो तो यह तुम्हारे हक़ में बेहतर है।'' (क़ुरआन, सूरा-62, आयत- 9)

''मोमिनो! तुमपर रोज़े फ़र्ज़ किए गए हैं, जिस तरह तुमसे पहले लोगों पर फ़र्ज़ किए गए थे, ताकि तुम परहेज़गार बनो।''

(क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 183)

''और जो शख़्स कोई बुरा काम कर बैठे या अपने हक़ में ज़ुल्म कर ले, फिर ख़ुदा से बख़्शिश माँगे, तो ख़ुदा को बख़्शनेवाला मेहरबान पाएगा।'' (क़ुरआन, सूरा-4, आयत- 110)

''जो आसूदगी [ख़ुशहाली] और तंगी में (अपना माल ख़ुदा की राह में) ख़र्च करते हैं और ग़ुस्से को रोकते और लोगों के क़ुसूर माफ़ करते हैं और ख़ुदा नेक लोगों को दोस्त रखता है।''

(क़ुरआन, सूरा-3, 134)

''और ख़ुदा और उसके रसूल के हुक्म पर चलो और आपस में झगड़ा न करना कि (ऐसा करोगे तो) तुम बुज़दिल हो जाओगे और तुम्हारा इक़बाल जाता रहेगा [तुम्हारी हवा उखड़ जाएगी] और सब्र से काम लो कि ख़ुदा सब्र करनेवालों का मददगार है।''

(क़ुरआन, सूरा-8, आयत- 46)

इस्लाम में आदर्श न्याय

इस्लाम की न्यायिक व्यवस्था दुनिया में सर्वोच्च है।

इस्लाम में दुश्मनों के साथ भी सच्चा न्याय करने का आदेश, न्याय के सर्वोच्च आदर्श को प्रस्तुत करता है। इसे नीचे दी गई आयत में देखिए :

''ऐ ईमान वालो! ख़ुदा के लिए इंसाफ़ की गवाही देने के लिए खड़े हो जाया करो और लोगों की दुश्मनी तुमको इस बात पर तैयार न करे

कि इंसाफ़ छोड़ दो। इंसाफ़ किया करो कि यही परहेज़गारी की बात है और ख़ुदा से डरते रहो। कुछ शक नहीं कि ख़ुदा तुम्हारे तमाम कामों से ख़बरदार है।'' (क़ुरआन, सूरा-5, आयत- 8)

''ऐ ईमानवालो ! इन्साफ़ पर क़ायम रहो और ख़ुदा के लिए सच्ची गवाही दो, चाहे (इसमें) तुम्हारा या तुम्हारे माँ-बाप और रिश्तेदारों का नुक़सान ही हो। अगर कोई अमीर है या फ़क़ीर, तो ख़ुदा उनका ख़ैरख़्वाह है। तो तुम नफ़्स की ख़्वाहिश के पीछे चलकर अद्ल (इन्साफ़) को न छोड़ देना। अगर तुम पेचदार शहादत दोगे या (शहादत से) बचना चाहोगे, तो (जान रखो) ख़ुदा तुम्हारे सब कामों को जानता है।'' (क़ुरआन, सूरा- 4, आयत- 135)

बदनाम किया जाता है कि इस्लाम में ग़ैरमुसलमानों के साथ ज़्यादती करने का आदेश है। जबकि ग़ैरमुसलमानों के साथ ही नहीं, दुश्मनों के साथ भी ज़्यादती की मनाही है, इस्लाम में। देखें :

''और जो लोग तुमसे लड़ते हैं, तुम भी ख़ुदा की राह में उनसे लड़ो, मगर ज़्यादती [अत्याचार व अन्याय] न करना कि ख़ुदा ज़्यादती करनेवालों को दोस्त नहीं रखता।''

(क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 190)

इस्लाम में किसी निर्दोष की हत्या की इजाज़त नहीं है ऐसा करने वाले की एक ही सज़ा है, ख़ून के बदले ख़ून। लेकिन यह सज़ा केवल क़ातिल को ही मिलनी चाहिए और इसमें ज़्यादती मना है। इसे ही तो कहते हैं सच्चा इंसाफ़। देखिए नीचे दिए गए अल्लाह के ये आदेश :

''और जिस जानदार का मारना ख़ुदा ने हराम किया है, उसे क़त्ल न करना मगर जायज़ तौर पर (यानी शरीअत के फ़तवे [हुक्म] के मुताबिक़) और जो शख़्स ज़ुल्म से क़त्ल किया जाए, हमने उसके वारिस को इख़्तियार दिया है (कि ज़ालिम क़ातिल से बदला ले) तो उसको चाहिए कि क़त्ल (के क़िसास) में ज़्यादती न करे कि वह मंसूर व फ़तहयाब है।'' (क़ुरआन, सूरा-17, आयत- 33)

''मोमिनो ! तुमको मक़्तूलों के बारे में क़िसास (यानी ख़ून के बदले ख़ून) का हुक्म दिया जाता है (इस तरह पर कि) आज़ाद के बदले

आज़ाद (मारा जाए) और ग़ुलाम के बदले ग़ुलाम और औरत के बदले औरत और अगर क़ातिल को उसके (मक़्तूल) भाई (के क़िसास में) से कुछ माफ़ कर दिया जाए, तो (वारिस मक़्तूल को) पसन्दीदा तरीक़े से (क़रारदाद की) पैरवी (यानी ख़ूँबहा का मुतालबा) करना और (क़ातिल को) भले तरीक़े से अदा करना चाहिए। यह परवरदिगार की तरफ़ से तुम्हारे लिए आसानी और मेहरबानी है, जो इसके बाद ज़्यादती करे, उसके लिए दुःख का अज़ाब है।''

(क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 178)

''और ऐ अक़्लवालो! क़िसास (के हुक्म) में (तुम्हारी) ज़िन्दगानी है कि तुम (क़त्ल व ख़ूंरेज़ी से) बचो।''

(क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 179)

''अगर किसी को वसीयत करनेवाले की तरफ़ से (किसी वारिस की) तरफ़दारी या हक़तलफ़ी का डर हो तो अगर वह (वसीयत को बदल कर) वारिसों में सुलह करा दे, तो उसपर कुछ गुनाह नहीं। बेशक ख़ुदा बख़्शनेवाला (और) रहम वाला है।''

(क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 182)

''और जो चोरी करे, मर्द हो या औरत, उनके हाथ काट डालो। यह उनके फ़ेलों [कर्मों] की सज़ा और ख़ुदा की तरफ़ से सीख है और ख़ुदा ज़बरदस्त (और) हिक्मत वाला है।''

(क़ुरआन, सूरा-5, आयत- 38)

''मोमिनो! तुमको जायज़ नहीं कि ज़बरदस्ती औरतों के वारिस बन जाओ और (देखना) इस नीयत से कि जो कुछ तुमने उनको दिया है उसमें से कुछ ले लो, उन्हें (घरों में) मत रोक रखना। हाँ, अगर वे खुले तौर पर बदकारी करें, (तो रोकना मुनासिब नहीं) और उनके साथ अच्छी तरह से रहो-सहो। अगर वह तुमको ना-पसन्द हो तो अजब नहीं कि तुम किसी चीज़ को ना-पसन्द करो और ख़ुदा उसमें बहुत-सी भलाई पैदा कर दे।'' (क़ुरआन, सूरा-4, आयत- 19)

''जो माल माँ-बाप और रिश्तेदार छोड़ मरें, थोड़ा हो या बहुत, उसमें मर्दों का भी हिस्सा है और औरतों का भी। ये हिस्से (ख़ुदा के) मुक़र्रर किए हुए हैं।'' (क़ुरआन, सूरा-4, आयत- 7)

इस्लाम की सर्वोत्तम न्यायिक व्यवस्था के कारण ही इस्लामी देशों में (जहाँ यह व्यवस्था लागू है) क़त्ल, डकैती, राहज़नी, बलात्कार, व्यभिचार और चोरी आदि नहीं है। दुनिया के लोग बड़े आश्चर्य से देखते हैं कि दुबई, ईरान, इराक़, सऊदी अरब, क़ुवैत आदि मुस्लिम देशों में जुमे की अज़ान होते ही दुकानदार अपनी-अपनी दुकानों में करोड़ों की क़ीमत का कुंटलों सोना छोड़कर नमाज़ पढ़ने के लिए चल देते हैं। दुकान में किसी के न रहने पर भी कभी कोई चोरी नहीं होती।

आज सारी दुनिया में नौजवानों को अफ़ीम से बनी नशीली दवाएं डस रही हैं लेकिन यह इस्लामी न्यायिक व्यवस्था का ही कमाल है कि इस्लामी न्याय प्रणाली लागू करनेवाले देश इन सामाजिक बुराइयों से बचे हुए हैं।

इस्लाम में दुनिया का सर्वोच्च व्यावहारिक मानवीय आदर्श

देखें क़ुरआन मजीद की ये आयतें :

''नेकी यही नहीं कि तुम पूरब या पच्छिम (को क़िब्ला समझकर उन) की तरफ़ मुंह कर लो, बल्कि नेकी यह है कि लोग ख़ुदा पर और फ़रिश्तों पर और ख़ुदा की किताब पर और पैग़म्बरों पर ईमान लाएं और माल बावजूद अज़ीज़ रखने के रिश्तेदारों और यतीमों और मुहताजों और मुसाफ़िरों और मांगनेवालों को दें और गर्दनों (को छुड़ाने) में[1] ख़र्च करें और नमाज़ पढ़ें और ज़कात दें और जब अह्द कर लें तो उसको पूरा करें और सख़्ती और तक्लीफ़ में और (लड़ाई के) मैदान में साबित क़दम रहें। यही लोग हैं जो (ईमान में) सच्चे हैं और यही हैं जो (ख़ुदा से) डरनेवाले हैं।''

(क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 177)

1. यहाँ 'गर्दनों (को छुड़ाने) में' का मतलब ग़ुलामों को ख़रीदकर फिर उन्हें आज़ाद कर देने से है।

‘‘और एक्-दूसरे का माल ना-हक़ न खाओ और न उसको (रिश्वत के तौर पर) हाकिमों के पास पहुँचाओ ताकि लोगों के माल का कुछ हिस्सा नाजायज़ तौर पर खा जाओ और (इसे) तुम जानते भी हो।’’

(क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 188)

‘‘अगर तुम ख़ैरात ज़ाहिर में दो तो वह भी ख़ूब है, और अगर छिपे दो और दो भी ज़रूरतमन्द को, तो यह ख़ूबतर है और (इस तरह का देना) तुम्हारे गुनाहों को भी दूर कर देगा और ख़ुदा को तुम्हारे कामों की ख़बर है।’’ (क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 271)

‘‘ख़ुदा सूद [अर्थात ब्याज] को ना-बूद (यानी बे-बरकत) करता और ख़ैरात [अर्थात् दान] (की बरकत) को बढ़ाता है और ख़ुदा किसी ना-शुक्रे गुनाहगार को दोस्त नहीं रखता।’’

(क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 276)

‘‘मोमिनो! [अर्थात् मुसलमानो!] ख़ुदा से डरो और अगर ईमान रखते हो तो जितना सूद [ब्याज] बाक़ी रह गया है, उसको छोड़ दो।

अगर ऐसा न करोगे, तो ख़बरदार हो जाओ (कि तुम) ख़ुदा और रसूल से जंग [अर्थात् युद्ध] करने के लिए (तैयार होते हो) और अगर तौबा [अर्थात् प्रायश्चित] कर लोगे (और सूद छोड़ दोगे) तो तुम को अपनी असल रक़म लेने का हक़ है, जिसमें न औरों का नुक़्सान, और न तुम्हारा नुक़्सान।

और अगर क़र्ज़ लेनेवाला तंगदस्त हो तो (उसे) फ़राख़ी (के हासिल होने) तक मोहलत (दो) और अगर (क़र्ज़ की रक़म) बख़्श ही दो, तो तुम्हारे लिए ज़्यादा अच्छा है, बशर्ते कि समझो।

और उस दिन से डरो, जबकि तुम ख़ुदा के हुज़ूर में लौटकर जाओगे और हर शख़्स अपने आमाल का पूरा-पूरा बदला पाएगा और किसी का कुछ नुक़्सान न होगा।’’

(क़ुरआन, सूरा-2, आयत- 278-281)

‘‘और यतीमों का माल (जो तुम्हारे क़ब्ज़े में हो) उनके हवाले कर दो और उनके पाकीज़ा (और उम्दा) माल को (अपने ख़राब और) बुरे माल से न बदलो और न उनका माल अपने माल में मिलाकर खाओ कि यह बड़ा सख़्त गुनाह है।’’ (क़ुरआन, सूरा-4, आयत-2)

‘‘जो लोग यतीमों का माल नाजायज़ तौर पर खाते हैं, वे अपने पेट में आग भरते हैं और दोज़ख़ में डाले जाएंगे।’’

(क़ुरआन, सूरा-4, आयत- 10)

‘‘और यतीम के माल के पास भी न जाना, मगर ऐसे तरीक़े से कि बहुत पसंदीदा हो, यहाँ तक कि वह जवानी को पहुँच जाए और नाप और तौल इंसाफ़ के साथ पूरी-पूरी किया करो। हम किसी को तक्लीफ़ नहीं देते, मगर उसकी ताक़त के मुताबिक़ और जब (किसी के बारे में) कोई बात कहो, तो इंसाफ़ से कहो, गो वह (तुम्हारा) रिश्तेदार ही हो और ख़ुदा के अह्द को पूरा करो। इन बातों का ख़ुदा तुम्हें हुक्म देता है, ताकि तुम नसीहत क़बूल करो।’’

(क़ुरआन, सूरा-6, आयत- 152)

‘‘सदक़े (यानी ज़कात व ख़ैरात) तो मुफ़लिसों और मुहताजों और सदक़ात के लिए काम करनेवालों का हक़ है और उन लोगों का जिनके दिलों का रखना मंज़ूर है और ग़ुलामों के आज़ाद कराने में और क़र्ज़दारों (के क़र्ज़ अदा करने में) और ख़ुदा की राह में और मुसाफ़िरों (की मदद) में (भी यह माल ख़र्च करना चाहिए। ये हुक़ूक़) ख़ुदा की तरफ़ से मुक़र्रर कर दिए गए हैं और ख़ुदा जानने वाला (और) हिक्मतवाला है।’’ (क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 60)

‘‘और यतीम के माल के पास भी न फटकना, मगर ऐसे तरीक़े से कि बहुत बेहतर हो, यहाँ तक कि वह जवानी को पहुँच जाए और अह्द (वायदे) को पूरा करो कि अह्द के बारे में ज़रूर पूछ होगी।

और जब (कोई चीज़) नापकर देने लगो, तो पैमाना पूरा भरा करो और (जब तौलकर दो, तो) तराज़ू सीधी रख कर तौला करो। यह बहुत अच्छी बात है और अंजाम के लिहाज़ से भी बहुत बेहतर है।

और (ऐ बन्दे !) जिस चीज़ का तुझे इल्म नहीं, उसके पीछे न पड़ कि कान और आँख और दिल इन सब (अंगों) से ज़रूर पूछ-ताछ होगी।

और ज़मीन पर अकड़ कर (और तन कर) मत चल कि तू ज़मीन को फाड़ तो नहीं डालेगा और न लम्बा होकर पहाड़ों (की चोटी) तक पहुँच जाएगा।

इन सब (आदतों) की बुराई तेरे परवरदिगार के नज़दीक बहुत ना-पसन्द है।'' (क़ुरआन, सूरा-17, आयत- 34-38)

''(ऐ पैग़म्बर !) कह दो कि लोगो ! मैं तुमको खुल्लम-खुल्ला नसीहत करनेवाला हूँ।

तो जो लोग ईमान लाए और नेक काम किए, उनके लिए बख़्शिश और आबरू की रोज़ी है।

और जिन लोगों ने हमारी आयतों में (अपने झूठे गुमान में) हमें आजिज़ करने के लिए कोशिश की, वे दोज़ख़ वाले हैं।''

(क़ुरआन, सूरा-22, आयत- 49-51)

''(देखो) पैमाना पूरा भरा करो और नुक़सान न किया करो। और तराज़ू सीधी रखकर तौला करो।

लोगों को उनकी चीज़ें कम न दिया करो और मुल्क में फ़साद न करते फिरो।

और उससे डरो, जिसने तुमको और पहली ख़ल्क़त [प्राणियों] को पैदा किया।'' (क़ुरआन, सूरा-26, आयत- 181-184)

''हर तानों भरे इशारे करने वाले चुग़लख़ोर की ख़राबी है, जो माल जमा करता और उसको गिन-गिनकर रखता है, और ख़याल करता है कि उसका माल उसकी हमेशा की ज़िन्दगी की वजह होगा। हरगिज़ नहीं, वह ज़रूर हुतमा में डाला जाएगा। और तुम क्या समझे कि हुतमा क्या है? वह खुदा की भड़काई हुई आग है, जो दिलों पर जा लिपटेगी, (और) वे उसमें बन्द कर दिए जाएँगे, यानी (आग के) लम्बे-लम्बे सुतूनों में।'' (क़ुरआन, सूरा-104, आयत- 1-9)

''भला तुमने उस शख़्स को देखा जो बदले (के दिन) को झुठलाता है। यह वही (बद-बख़्त) है जो यतीम को धक्के देता है, और फ़क़ीर को खाना खिलाने के लिए (लोगों को) तर्ग़ीब नहीं देता। तो ऐसे नमाज़ियों की ख़राबी है, जो नमाज़ की तरफ़ से ग़ाफ़िल रहते हैं। जो दिखावे का काम करते हैं, और बरतने की चीज़ें (उधार) नहीं देते।'' (क़ुरआन, सूरा-107, आयत- 1-7)

''कहो कि मैं सुबह के मालिक की पनाह माँगता हूँ, हर चीज़ की बुराई से, जो उसने पैदा की, और अँधेरी रात की बुराई से जब उसका अँधेरा छा जाए, और गण्डों पर (पढ़-पढ़कर) फूँकनेवालियों की बुराई से, और हसद (जलन) करनेवाले की बुराई से, जब हसद करने लगे।'' (क़ुरआन, सूरा-113, आयत- 1-5)

''कहो कि मैं लोगों के परवरदिगार की पनाह माँगता हूँ, (यानी) लोगों के हक़ीक़ी बादशाह की, लोगों के माबूदे-बर-हक़ की, (शैतान) वस्वसा डालनेवाले की बुराई से जो (ख़ुदा का नाम सुनकर) पीछे हट जाता है, जो लोगों के दिलों में वस्वसे डालता है, (चाहे वह) जिन्नों में से (हो) या इंसानों में से।''

(क़ुरआन, सूरा-114, आयत- 1-6)

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) के वचन

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी, उनकी कथनी और करनी तथा क़ुरआन मजीद में अल्लाह के आदेश ही का नाम इस्लाम है।

हमने क़ुरआन मजीद में अल्लाह के आदेश देख लिए, हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की जीवनी देख ली। अब अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के कथन (हदीस) देखिए :

हदीस की सभी किताबों में सबसे महत्वपूर्ण किताबें 'बुख़ारी शरीफ़' और 'मुस्लिम शरीफ़' हैं। नीचे जो हदीसें दी जा रही हैं वे इन्हीं से ली गई हैं।

हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) का कथन है, ''अपने भाई की मदद करो चाहे वह ज़ालिम हो या मज़लूम।''

[आपसे] अर्ज़ किया गया, ''ऐ अल्लाह के पैग़म्बर! मज़लूम होने पर तो हम उसकी मदद कर सकते हैं, ज़ालिम होने के वक़्त किस तरह मदद करें?'' [पैग़म्बर ने] फ़रमाया, ''उसके हाथ पकड़ लो (ज़ुल्म न करने दो)।''

(बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1046)

हज़रत जरीर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि०) कहते हैं कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल0) ने फ़रमाया कि ''जो शख़्स रहम [यानी दया] नहीं करता है, उसपर रहम नहीं किया जाता।'' (बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1674)

हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि०) कहते हैं कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) न तो बे-हया थे, न गाली बकनेवाले, न किसी पर लानत करनेवाले, बल्कि अगर आपको किसी पर ग़ुस्सा आ जाता, तो यों फ़रमाते कि ''ऐ क्या हो गया! उसके सर पर ख़ाक!'' (बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1681)

हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, ''अगर मुसलमान किसी का हराम ख़ून न बहाए, उस

वक़्त तक उसके दीन [धर्म] में फैलाव और बढ़ोत्तरी ही होती रहेगी।''

(बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1693)

हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने फ़रमाया, ''सभी जानदारों में अल्लाह तआला को तीन शख़्स बुरे मालूम होते हैं- मुल्के-हरम में ज़ुल्म करनेवाला, दूसरा इस्लाम में जाहिलियत का तरीक़ा इख़्तियार करनेवाला, तीसरे नाहक़ ख़ून का चाहने वाला।''

(बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1697)

हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने फ़रमाया कि ''जल्द ही तुमको अमारत [नेतृत्व पद प्राप्त करने] की लालच होगी, लेकिन वह क़ियामत के दिन पछताने का ज़रीआ होगा, उसकी शुरुआत तो अच्छी मालूम होगी, लेकिन अंजाम बुरा होगा।''

(बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1725)

हज़रत माक़ल-बिन-यसार (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने फ़रमाया, ''जो हाकिम अपनी रिआया [यानी जनता] का बुरा चाहनेवाला होकर मर जाएगा, तो अल्लाह तआला उसपर जन्नत हराम कर देगा।'' (बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1727)

हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया कि, ''हाकिम को चाहिए कि ग़ुस्से की हालत में किसी का फ़ैसला न करे।'' (बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1729)

हज़रत आइशा (रज़ि०) फ़रमाती हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) का इर्शाद है कि ''अल्लाह तआला के नज़दीक सबसे ज़्यादा बुरा आदमी वह है जो हमेशा लड़ता-झगड़ता रहता है।'' (बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1730)

हज़रत अब्दुल्लाह (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने फ़रमाया कि ''जब तुम तीन आदमी हो, तो दो आदमी आपस में कानाफूसी न करें, जब तक (एक) साथ न हो जाएँ, क्योंकि यह कानाफूसी तीसरे को दुखी बनाती है।'' (बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1737)

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि०) कहते हैं कि एक शख़्स ने अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से पूछा कि कौन सा इस्लाम बेहतर है? पैग़म्बर ने फ़रमाया, ''लोगों को खाना खिलाना और जान-पहचान वाले और ग़ैर जान-पहचान वाले, दोनों को सलाम करना।'' (बुख़ारी शरीफ़, हदीस-1804)

एक व्यक्ति ने पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) से कहा, ''काफ़िरों के विरुद्ध अल्लाह से दुआ कीजिए, उन्हें लानत भेजिए।'' इस पर आप (सल्ल०) ने कहा, ''मुझे दुनिया में दया के लिए भेजा गया है, लानत करने के लिए नहीं।''

(मुस्लिम)

पिछले पन्नों में बयान की गई पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की करनी और कथनी (यानी हदीस) से, आपकी जीवनी से तथा क़ुरआन मजीद में अल्लाह की आयतों के विस्तृत अध्ययन से पाठक स्वयं देख सकते हैं कि इस्लाम ने शान्ति, दया व मानवता के उच्च व्यावहारिक आदर्शों को स्थापित किया।

दुनिया में केवल क़ुरआन मजीद में ही ईश्वरीय (यानी आध्यात्मिक) सत्य के साथ-साथ व्यावहारिक सत्य भी है। अपनी इसी विशेषता के कारण मक्का में प्रकट हुआ इस्लाम, सारी दुनिया में छा गया।

इसके बाद भी यदि कोई क़ुरआन मजीद में अल्लाह के इन आदेशों का ग़लत या मनचाहा अर्थ निकालता है तो इसके लिए क़ुरआन मजीद या इस्लाम ज़िम्मेदार नहीं है।

साथ ही पाठक यह भी निर्णय ले सकते हैं कि सलमान रुश्दी, अनवर शेख़ और तस्लीमा नसरीन जैसे लेखकों ने पूर्वाग्रह से ग्रसित होकर ही क़ुरआन मजीद की आयतों को आतंकवाद से जोड़ा।

इससे स्वयं सिद्ध होता है कि इस्लाम में कहीं भी आतंक का आदेश नहीं, बल्कि आतंक का विरोध ही है और जिहाद, आतंक नहीं, बल्कि आत्मरक्षा के लिए, आतंकवाद के विरोध का प्रयास है।

जैसे मैंने अपनी पुस्तक 'इस्लामिक आतंकवाद का इतिहास' में हिन्दू राजाओं व मुस्लिम बादशाहों के बीच युद्ध में हुए ख़ून-ख़राबे का उल्लेख किया

था, उसके बारे में अब मेरी समझ में आया है कि वह ख़ून-ख़राबा युद्ध का था, व्यक्ति विशेष का था, न कि इस्लाम का। युद्ध में ऐसे ख़ून-ख़राबे हर देश में, हर क़ौम में सदैव से होते रहे हैं। जैसे- इतिहास में सिकन्दर से लेकर हिटलर तक यही करते रहे। अपने देश भारत में अशोक के कलिंग विजय अभियान में एक लाख से अधिक लोग मारे गए थे। इनके इन आतंकी कार्यों के लिए इनका धर्म दोषी नहीं है। इसी तरह मुस्लिम बादशाहों के लिए भी ऐसा ही है।

सनातन वैदिक धर्म और इस्लाम

एकेश्वरवादी सत्य-धर्म इस्लाम सनातन है, वह इस दुनिया में सदैव से था।

इस्लाम का एकेश्वरवाद (तौहीद) अलग-अलग देश में अलग-अलग नामों से प्रतिपादित हुआ, जैसे: भारत में यह सनातन वैदिक धर्म के रूप में वेद, उपनिषद, गीता में मौजूद रहा।

कुछ हिन्दू भाई भ्रमवश यह समझते हैं कि इस्लाम अरब से आया हुआ धर्म है जो हिन्दुओं का विरोधी है। पहले मैं भी यही समझता था। लेकिन वास्तविक इस्लाम को जानने के बाद मुझे पता चला कि इस्लाम न तो अरब से आया और न ही केवल अरबवालों के लिए आया। यह परमेश्वर की ओर से आया हुआ धर्म है, जो केवल मुसलमानों के लिए ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण मानवजाति के लिए आया। क़ुरआन मजीद की सूरा-2, आयत-185 में है, ''क़ुरआन उतारा गया लोगों को सीधा रास्ता दिखाने के लिए।'' यहां 'लोगों' शब्द आया है न कि मुसलमान या अरबवाले। इसी तरह सूरा-25, आयत-1 में है, ''बड़ी बरकतवाला है वह जिसने यह 'फ़ुरक़ान' (यानी सत्य और असत्य में फ़र्क़ करनेवाला यह ग्रन्थ क़ुरआन) अपने बन्दे पर उतारा, ताकि वह सारे संसार के लिए हिदायत करनेवाला (यानी सही रास्ता दिखानेवाला) हो।''

यह हिन्दुओं का विरोधी भी नहीं है क्योंकि इस्लाम किसी व्यक्ति या किसी समुदाय या किसी धर्म का विरोध नहीं करता। इस्लाम केवल बुराइयों का विरोध करता है और यह विरोध केवल सैद्धान्तिक है। इसके लिए किसी भी प्रकार की ज़बरदस्ती नहीं है। क़ुरआन मजीद में सूरा-2, आयत-256 में अल्लाह का आदेश है कि ''दीने-इस्लाम में ज़बरदस्ती नहीं।'' सूरा-109, आयत-6 में है, ''तुम अपने दीन [धर्म] पर हम अपने दीन पर।''

मैंने देखा है कि इस्लाम के बारे में हिन्दुओं को तथा सनातन वैदिक धर्म के बारे में मुसलमानों को सही जानकारी न होने के कारण वे अपने-अपने धर्म को

एक दूसरे के उल्टा समझने की भूल कर बैठते हैं। जबकि वास्तविकता यह है कि इस्लाम के सबसे नज़दीक अगर कोई धर्म है तो वह है 'सनातन वैदिक धर्म'।

पाठक सनातन वैदिक धर्म को आज का हिन्दू धर्म समझने की भूल न करें, क्योंकि हिन्दू नाम का कोई धर्म नहीं है। यह तो रहने का एक तरीक़ा है। हिन्दुओं के वास्तविक धर्म का नाम सनातन वैदिक धर्म है, लेकिन दुख के साथ लिखना पड़ रहा है कि अधिकांश हिन्दू अपने वास्तविक धर्म यानी सनातन वैदिक धर्म को लगभग भूलकर सत्य के रास्ते से भटक चुके हैं।

भारत में लगभग 75 करोड़ हिन्दू और लगभग 25 करोड़ मुसलमान साथ-साथ रहते हैं। यदि हम एक-दूसरे के धर्म को एक-दूसरे के विचारों को नहीं जानेंगे तो इंसानियत विरोधी तत्त्व, समाज विरोधी तत्त्व आसानी के साथ हम लोगों के बीच भ्रम, सन्देह और अविश्वास पैदा कर देंगे, जैसा कि आजकल हो रहा है। इस देश के लिए यह एक बहुत बड़ी समस्या है।

अत: यह आवश्यक है कि मुसलमान भाइयों के धर्म इस्लाम को हिन्दू भाई जानें और सनातन वैदिक धर्म यानी वेद, उपनिषद् और गीता को मुसलमान भाई जानें ताकि धर्म के नाम पर कोई भी हमारे बीच भ्रम यानी ग़लत फ़हमी पैदा न कर सके। यह एक हिकमत (तत्त्वपूर्ण बात) है। इस हिकमत से सत्य सामने आएगा। भ्रम और सन्देह दूर होगा। हिन्दुओं और मुसलमानों में एक-दूसरे के प्रति विश्वास बढ़ेगा। सत्य के प्रति भी विश्वास बढ़ेगा और यही विश्वास भविष्य में लोगों के लिए एक नया रास्ता खोलेगा। यह क़ुरआन मजीद की भी हिकमत (तत्त्वपूर्ण शिक्षा) है कि ''आओ एक ऐसी बात की ओर जो हमारे और तुम्हारे बीच समान है। यह कि हम अल्लाह यानी परमेश्वर के सिवा किसी की वन्दना न करें।'' (3:64) इस हिकमत के अनुसार हम देखेंगे कि सनातन वैदिक धर्म और इस्लाम में क्या समानताएँ हैं।

सनातन वैदिक धर्म और इस्लाम में आश्चर्यजनक समानताएं

वास्तविक इस्लाम को जानने के लिए जब मैंने दुबारा क़ुरआन पढ़ना शुरू किया तो देखा कि यह वही सत्य है जो हज़ारों साल से हमारे वेद, उपनिषद् और गीता में मौजूद है। इस तरह मैंने इस्लाम में अपनापन पाया। जैसे : क़ुरआन

की शुरुआत में 'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' अर्थात 'शुरू परमेश्वर का नाम लेकर जो बड़ा कृपालु और अत्यन्त दयालु है' पढ़ते ही मुझे ओ३म् (ओम) याद आया, जिसका शाब्दिक अर्थ होता है 'परम कल्याणकारी परमेश्वर'। वैदिक मंत्र की शुरुआत ओ३म् से होती है, जब यह ओ३म् किसी मंत्र की शुरुआत में लगाया जाता है तो उसका भावार्थ हो जाता है 'शुरू परम कल्याणकारी परमेश्वर के नाम से' या 'शुरू परमेश्वर के नाम से, जो बड़ा कृपालु और अत्यन्त दयालु है', यही तो है 'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'।

इस्लाम की बुनियाद शिर्क का विरोध यानी 'ला इला-ह इल्लल्लाह' (अर्थात 'अल्लाह यानी परमेश्वर के अलावा कोई उपासना के योग्य नहीं है') सनातन वैदिक धर्म की भी बुनियाद है।

संसार के सबसे पुराने धर्मग्रन्थ ऋग्वेद में 'ला इला-ह इल्लल्लाह' मौजूद है। ऋग्वेद मण्डल-1, सूक्त-7 का 10 वां मंत्र है :

इन्द्रं वो विश्वतस्परि हवामहे जनेभ्यः।

अस्माकमस्तु केवलः।। (ऋग्वेद, मण्डल-1, सूक्त-7, मंत्र-10)

भावार्थ- हे मनुष्यो ! तुम को अत्यन्त उचित है कि मुझको छोड़कर उपासना करने योग्य किसी दूसरे देव को कभी मत मानो, क्योंकि एक मुझको छोड़कर कोई दूसरा ईश्वर नहीं है।

(हिन्दी भाष्य महर्षि दयानन्द[1])

इस भावार्थ का संक्षिप्त रूप है 'परमेश्वर के अलावा कोई पूज्य नहीं है।' और यही है 'ला इला-ह इल्लल्लाह'।

1. वेद एक पूर्ण एकेश्वरवादी ईश्वरीय ग्रन्थ हैं। वेदों की भाषा वैदिक संस्कृत व्याकरण रहित है अतः लोग उसके मंत्रों के अर्थ को मनमाने ढंग से बिगाड़ देते हैं।
स्वामी दयानन्द सरस्वती वैदिक संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे और एक एकेश्वरवादी धर्माचार्य थे। वे केवल वेदों पर ही विश्वास रखते थे और उनके आदेशों को ही सर्वोच्च मानते थे। अतः इस किताब में दिए गए वेद मंत्रों का हिन्दी भावार्थ मैंने स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा वेदों के किए गए हिन्दी भाष्य से लिया है क्योंकि वही शुद्ध है।
श्री स्वामी दयादन्द सरस्वती के ही हिन्दी भाष्य को लेने का एक दूसरा कारण यह भी है कि जैसा कि मैं इस किताब में पीछे लिख चुका हूँ कि स्वामी जी ने अपनी किताब 'सत्यार्थप्रकाश' में इस्लाम को लेकर जो लिखा था उससे बहुत से लोग इस्लाम को लेकर भ्रमित हुए होंगे। इसी लिए मैंने वैदिक मंत्रों का भावार्थ वही लिया जो वैदिक धर्म के प्रकाण्ड विद्वान श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती ने लिखा ताकि 'सत्यार्थप्रकाश' पढ़कर भ्रमित हुए लोग स्वामी जी के ही भाष्य से सच्चाई को समझ सकें।

गीता में है :

मत्तः परतरं नान्यत्किंचिदस्ति धनञ्जय।

(गीता, अध्याय-7, श्लोक-7)

"हे धनञ्जय! मुझ (परमेश्वर) से अलग दूसरा कोई भी ईश्वर नहीं है।"

यहाँ यह बताना आवश्यक है कि श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में परमेश्वर के सन्देश हैं। इन सन्देशों को देनेवाले श्रीकृष्ण एक महान् योगी[1] थे। इसी लिए उन्हें योगेश्वर कहा गया है। परमेश्वर से सन्देश प्राप्त करने के लिए वे किसी भी अवस्था में परमेश्वर से योग यानी सम्पर्क कर उनका सन्देश प्राप्त कर सकते थे।

इस्लाम के अनुसार अल्लाह यानी परमेश्वर के सिवा किसी अन्य की उपासना या वन्दना 'शिर्क' है। इस्लाम इसे सबसे बड़ी बुराई कहता है। सनातन वैदिक धर्म भी इस शिर्क को उतनी ही बड़ी बुराई कहता है जितना कि इस्लाम कहता है।

श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में अध्याय-7, श्लोक-20 में श्रीकृष्ण अर्जुन को परमेश्वर का सन्देश देते हुए कहते हैं :

कामैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया।।

अर्थात्: उन-उन भोगों की कामना द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है (वे लोग) अपने स्वभाव से प्रेरित होकर उस-उस नियम को धारण करके अन्य देवताओं को पूजते हैं।

इसका भावार्थ है- भोग विलास, ऐशो-आराम की भौतिक वस्तुओं धन आदि को पाने की इच्छा के कारण जिनका विवेक समाप्त हो चुका है (वे लोग) इनको पाने की इच्छा से (यानी लालच से प्रेरित होकर) अलग-अलग देवताओं की पूजा अलग-अलग विधि से करते हैं।

गीता में ही अध्याय-7, श्लोक-23 में है-

अन्तवत्तु फलं तेषां तद्‌भवत्यल्पमेधसाम्।
देवान्देवयजो यान्ति मद्‌भक्ता यान्ति मामपि ।।

भावार्थ : परन्तु परमेश्वर के सिवा अन्य देवताओं को पूजनेवाले उन ना समझों के वे फल (यानी वे भौतिक वस्तुएं यानी वे दुनियावी

1. परमेश्वर से सम्पर्क करने की क्रिया का नाम 'योग' है और इस योग के माध्यम से परमेश्वर से सम्पर्क स्थापित कर सकने वाला 'योगी' है।

ज़िन्दगी के सामान) कुछ दिनों के हैं (तथा वे) देवताओं को पूजनेवाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। और मुझ परमेश्वर के भक्त (जिन्होंने अपने आपको मेरे सुपुर्द कर दिया वे) मुझको ही प्राप्त होते हैं यानी मेरे लोक को जाते हैं यानी मोक्ष को प्राप्त होते हैं यानी जन्नत को जाते हैं।

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्।।62।।

(गीता : अध्याय-18, श्लोक-62)

(इसलिये) ऐ अर्जुन! (तू) सब प्रकार से उस परमेश्वर की ही शरण में जा। उस परमेश्वर की कृपा से (ही तू) परम् शान्ति को (तथा) सनातन परम धाम यानी मोक्ष को प्राप्त होगा।

इस्लाम में नमाज़ केवल एक परमेश्वर की ही निष्काम भाव से उपासना है। भोग-विलास की भौतिक वस्तुओं धन आदि की कामना के लिए परमेश्वर की सकाम उपासना या अन्य देवताओं की उपासना इस्लाम में है ही नहीं। अत: गीता के अनुसार ऐसी उपासना करनेवाले मुसलमान केवल मुक्ति यानी मोक्ष ही पाते हैं।

क़ुरआन में सूरा-10, आयत 106 में है :

''और ख़ुदा को छोड़कर ऐसी चीज़ को न पुकारना, जो न तुम्हारा कुछ भला कर सके और न कुछ बिगाड़ सके। अगर ऐसा करोगे, तो ज़ालिमों में हो जाओगे।''

सूरा-3, आयत-14 में अल्लाह फ़रमाता है :

''लोगों को उनकी ख़ाहिशों [यानी मनपसन्द] की चीज़ें यानी औरतें और बेटे और सोने और चाँदी के बड़े-बड़े ढेर और निशान लगे हुए घोड़े और मवेशी और खेती-बाड़ी ज़ीनतदार [यानी बड़ी सुहावनी] मालूम होती है, (मगर) ये सब दुनिया ही की ज़िन्दगी के सामान हैं और ख़ुदा के पास बहुत अच्छा ठिकाना है।''

सूरा-3, आयत-15 में है :

''(ऐ पैग़म्बर! उनसे) कहो कि भला मैं तुमको ऐसी चीज़ बताऊं, जो इन चीज़ों से कहीं अच्छी हो, (सुनो) जो लोग परहेज़गार [ईशपरायण]

हैं, उनके लिए ख़ुदा के यहाँ (बहिश्त के) यानी जन्नत के बाग़ हैं,जिनके नीचे नहरें बह रही हैं, उनमें वे हमेशा रहेंगे और पाकीज़ा औरतें हैं और (सबसे बढ़कर) ख़ुदा की ख़ुश्नूदी यानी प्रसन्नता और ख़ुदा (अपने नेक) बन्दों को देख रहा है।''

सूरा-3, आयत-16 व 17 में है :

''जो ख़ुदा से इल्तिजा [यानी प्रार्थना] करते हैं कि ऐ परवरदिगार! हम ईमान ले लाए, सो हम को हमारे गुनाहों को माफ़ फ़रमा और दोज़ख़ के अज़ाब यानी नरक की आग से बचा।''

''ये वे लोग हैं जो (कठिनाइयों में) सब्र करते और सच बोलते और इबादत में लगे रहते और (ख़ुदा की) राह में ख़र्च करते और सेहर के वक़्तों यानी रात की अंतिम घड़ियों में अपने गुनाहों की माफ़ी मांगा करते हैं।''

सूरा-18, आयत-46 में है :

''माल और बेटे तो केवल दुनिया की ज़िन्दगी की (रौनक़ व) ज़ीनत हैं और नेकियाँ जो बाक़ी रहनेवाली हैं, वे सवाब (इनाम) के लिहाज़ से तुम्हारे परवरदिगार के यहाँ बहुत अच्छी और उम्मीद के लिहाज़ से बहुत बेहतर हैं।''

इस्लाम के अनुसार अल्लाह (यानी परमेश्वर) ने ही ब्रह्माण्ड की रचना की, वही पालनकर्ता है और वही प्रलय करनेवाला है।

यही वेद भी कहते हैं। ऋग्वेद में है :

परि धामानि यानि ते त्वं सोमासि विश्वत:।

पवमान ऋतुभि: कवे ।। (ऋग्वेद : मण्डल-9, सूक्त-66, मंत्र-3)

भावार्थ- परमात्मा उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय (यानी क़ियामत) तीनों प्रकार की क्रियाओं का हेतु है। अर्थात् उसी से संसार की उत्पत्ति और उसी में स्थिति और उसी से प्रलय होता है।

(हिन्दी भाष्य महर्षि दयानन्द)

त्वं द्यां च महिव्रत पृथिवीं चाति उभ्रिषे।
प्रति द्रापिममुञ्चथा: पवमान महित्वना ।।

(ऋग्वेद : मण्डल-9, सूक्त-100, मंत्र-9)

भावार्थ- परमेश्वर ने द्युलोक, और पृथ्वीलोक को ऐश्वर्यशाली बनाकर उसे अपने रक्षा रूप कवच से आच्छादित किया। ऐसी विचित्र रचना से इस अनन्त ब्रह्माण्ड को रचा है कि उसके महत्त्व को कोई नहीं पा सकता। (हिन्दी भाष्य महर्षि दयानन्द)

योः न पिता जनिता यो विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यो देवानां नामधा एक एव सम्प्रश्नं भुवना यन्त्यन्या ।।

(ऋग्वेद : मण्डल-10, सूक्त-82, मंत्र-3)

भावार्थ- जो परमेश्वर हमारा पालक, हमारा उत्पन्न करनेवाला जो समस्त जगत् का निर्माता है और समस्त स्थानों और लोकों तथा पदार्थों को जानता है और जो समस्त पदार्थों का नाम रखनेवाला है वही अद्वितीय (यानी उसके बराबर कोई दूसरा नहीं) है समस्त समस्याओं का वही एक मात्र समाधान है।

(हिन्दी भाष्य महर्षि दयानन्द)

गीता अध्याय-7 के श्लोक-6 में है-

अहं कृत्स्नस्य जगत: प्रभव: प्रलयस्तथा

मैं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति तथा प्रलय (का मूल कारण) हूँ।

यजुर्वेद में है-

अपां पृष्ठमसि योनिरग्ने: समुद्रमभित: पिन्वमानम्।

वर्धमानो महाँ२आ च पुष्करे दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथस्व ।।

(यजुर्वेद, तेरहवाँ अध्याय, मंत्र-2)

भावार्थ- मनुष्यों को जिस सत्, चित् और आनन्दस्वरूप, सब जगत् का रचनेहारा, सर्वत्र व्यापक, सबसे उत्तम और सर्वशक्तिमान् ब्रह्म की उपासना से सम्पूर्ण विद्यादि अनन्त गुण प्राप्त होते हैं उसका सेवन क्यों न करना चाहिए। (हिन्दी भाष्य महर्षि दयानन्द)

इस्लाम के अनुसार एक और केवल एक अल्लाह (यानी परमेश्वर) जो अजन्मा, अविनाशी, निराकार और सर्वशक्तिमान है। वह न तो जन्म लेता है और न मरता ही है।

वेद भी ऐसा ही कहते हैं। श्वेताश्वतरोपनिषद् अध्याय-6, श्लोक-8 में है :

न तस्य कार्यं करणं च विद्यते

भावार्थ- उस (परमेश्वर) के शरीर और इंद्रियाँ नहीं हैं अर्थात वह निराकार है। (वह खाने-पीने या किसी भी प्रकार की इच्छाओं या आवश्यकताओं से परे है।)

केनोपनिषद् खण्ड-1, श्लोक-6 में है-

यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यति।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ।।

भावार्थ- जिसे कोई आँख से नहीं देखता बल्कि जिसकी सहायता से आँखें देखती हैं उसी को तू ईश्वर जान। आँखों से दिखाई देनेवाले जिन (अलग-अलग) तत्वों को ईश्वर मानकर लोग उपासना करते हैं, वह ईश्वर नहीं है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् अध्याय-6, श्लोक-9 में है :

न तस्य कश्चित्पतिरस्ति लोके

न चेशिता नैव च तस्य लिङ्गम्।

स कारणं करणाधिपाधिपो

न चास्य कश्चिज्जनिता न चाधिपः ।।

भावार्थ- ब्रह्माण्ड में उसका कोई स्वामी नहीं है, न कोई शासक या उसका चिह्न ही है। वह समस्त जीव-जगत (मख़्लूक़ात) को पैदा करनेवाला व उसका स्वामी है। उसका पैदा करनेवाला और स्वामी कोई नहीं है।

इस्लाम का विश्व प्रसिद्ध नारा 'अल्लाहु अकबर!' (अर्थात् अल्लाह सबसे बड़ा है, या अल्लाह सबसे महान् है।) एक पूर्ण सत्य है, सार्वभौमिक सत्य है। यह सत्य तब भी था जब दुनिया नहीं थी, आज भी है और तब भी

रहेगा जब प्रलय (यानी क़ियामत) के बाद यह दुनिया नहीं रहेगी। सनातन वैदिक धर्म का भी मूल यही है।

'पूर्णस्य पूर्ण मादाय पूर्णमेवावशिष्यते'

(परमेश्वर बहुत बड़ा है, इतना बड़ा है कि) उस पूर्ण में से पूर्ण को निकाल देने पर पूर्ण ही शेष बचता है। (अर्थात् अल्लाह अनन्त है, क्योंकि केवल अनन्त में से ही अनन्त को निकाल देने पर शेष अनन्त ही बचता है।)

श्वेताश्वतरोपनिषद् अध्याय-6, श्लोक-8 में अल्लाहु अकबर :
'न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते'

भावार्थ- उस (परमेश्वर) के समान और उससे बढ़कर भी कोई दिखाई नहीं देता अर्थात परमेश्वर यानी अल्लाह सबसे बड़ा है। वह अद्वितीय है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् अध्याय-4 श्लोक-19 में है-
नैनमूर्ध्वं न तिर्यञ्चं नमध्ये परिजग्रभत्।
न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः ।।

भावार्थ- (परमेश्वर अनन्त है, वह इतना बड़ा है कि) उसे ऊपर से, इधर-उधर से अथवा मध्य में भी कोई छू नहीं सकता। जिसका नाम अत्यन्त महिमायुक्त है यानी जो सबसे महान है। ऐसे उस परमेश्वर की कोई उपमा भी नहीं है यानी वह अतुलनीय है, उसका न तो कोई अवतार है, न कोई मूर्ति है और न तस्वीर ही है।

इस तरह सनातन वैदिक धर्म की मुख्य मान्यता है कि परमेश्वर (यानी अल्लाह) अजन्मा, अविनाशी, निराकार, सर्वशक्तिमान, अद्वितीय और अतुलनीय है। उसका न कोई बेटा है, न बेटी। न माँ है, न बाप। न भाई है, न बहन और न पत्नी ही है। इस्लाम की भी मुख्य मान्यता यही है।

''(वही) आसमानों और ज़मीन का पैदा करने वाला (है), उसके औलाद कहाँ से हो, जबकि उसकी बीवी ही नहीं और उसने हर चीज़ को पैदा किया है और वह हर चीज़ की ख़बर रखता है।''

(क़ुरआन, सूरा-6, आयत- 101)

''और यहूद कहते हैं कि उज़ैर ख़ुदा के बेटे हैं और ईसाई कहते हैं कि मसीह ख़ुदा के बेटे हैं। यह उनके मुंह की बातें हैं। पहले काफ़िर भी

इसी तरह की बातें कहा करते थे, ये भी उन्हीं की रीस करने लगे हैं। खुदा इनको हलाक करे, ये कहां बहके फिरते हैं।''

(क़ुरआन, सूरा-9, आयत- 30)

गीता के प्रसिद्ध श्लोक

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

(अध्याय-2, श्लोक-47)

[यानी तेरा कर्म करने में ही अधिकार है (उसके) फलों में कभी नहीं।] का व्यावहारिक रूप मैंने इस्लाम में ही देखा है। एक मुसलमान ही व्यावहारिक रूप से लाभ-हानि, जीवन-मरण, यश-अपयश को अल्लाह की मर्ज़ी समझकर सहजता से स्वीकार करता है। वह हर बात में कहता है 'इंशा अल्लाह' (यानी अल्लाह ने चाहा तो)।

पाठक स्वयं यह भी अनुभव कर सकते हैं कि यदि एक मुसलमान परोपकार का कार्य करता है तो उसके लिए वह सोचता है कि वह कार्य उसने नहीं किया, बल्कि अल्लाह ने किया। अपने द्वारा किए गए कार्य के लिए वह न तो घमंड करता है और न ही उसके बदले कोई कामना। यह इस्लाम ही है जो एक मनुष्य को व्यावहारिक रूप से निष्काम कर्मयोगी बनाता है।

गीता में सकाम[1] कर्म और सकाम उपासना को निम्न तथा निष्काम[2] कर्म और निष्काम उपासना को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। केवल इस्लाम ही एक मात्र ऐसा धर्म है जहाँ परमेश्वर की सकाम उपासना है ही नहीं। वहाँ केवल निष्काम उपासना ही है।

उदाहरण के लिए क़ुरआन मजीद की शुरुआत सूरा फ़ातिहा[3] की ईश वन्दना से होती है। इस ईश वन्दना में अपने लिए भोग-विलास, ऐशो-आराम की भौतिक वस्तुओं धन आदि की कोई कामना नहीं है। यह निष्काम भाव से की गई परमेश्वर की वन्दना है। एक मुसलमान ही बिना आलस्य, बिना नाग़ा, हर हाल में प्रतिदिन पाँच वक़्त अत्यन्त श्रद्धा और अत्यन्त आस्था के साथ परमेश्वर की निष्काम भाव से उपासना करता है। परमेश्वर के प्रति निष्काम भाव से ऐसा

1. सकाम का मतलब है - सांसारिक जीवन (यानी दुनियावी ज़िन्दगी) के लिए।
2. निष्काम का मतलब है - सांसारिक जीवन के लिए न होकर केवल परमेश्वर (यानी अल्लाह) के लिए समर्पण।
3. 'सूरा फ़ातिहा' इसी किताब के पेज नं. 54 में देखें।

समर्पण और कहीं नहीं है। यह इस्लाम ही है जो एक मनुष्य को परमेश्वर के प्रति समर्पणकारी बनाता है। ऐसे समर्पणकारी भक्त के लिए गीता में परमेश्वर का सन्देश है :

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।

तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।।

(अध्याय-9, श्लोक-22)

जो अनन्य प्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वर को निरन्तर याद करते हुए निष्काम भाव से मेरी उपासना करते हैं। प्रतिदिन सदैव मेरी उपासना करनेवाले उन लोगों का योग-क्षेम मैं स्वयं प्राप्त कर देता हूँ।

परमेश्वर की ही शरण में गया ऐसा समर्पणकारी निष्काम उपासक आध्यात्मिक शान्ति और मोक्ष पाने का अधिकारी है। गीता के अध्याय-6, श्लोक 15 में है-

शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ।।

(ऐसा समर्पणकारी उपासक) मुझमें रहनेवाली परम आनन्द की सर्वोच्च शान्ति को प्राप्त होता है।

इसी तरह क़ुरआन मजीद में सूरा-2, आयत-112 में अल्लाह का वादा है कि

''हाँ जो ख़ुदा के आगे गर्दन झुका दे (यानी ईमान ले आए) और वह भले काम करनेवाला हो, तो उसका बदला उसके परवरदिगार के पास है और ऐसे लोगों को (क़ियामत के दिन) न किसी तरह का ख़ौफ़ [यानी भय] होगा और न वे ग़मनाक [यानी शोकाकुल] होंगे।''

सूरा-24 आयत-46 में है :

''हम ही ने रौशन आयतें [यानी सत्य को प्रकट कर देनेवाली आयतें] नाज़िल की हैं [यानी उतार दी हैं]। और ख़ुदा जिसको चाहता है, सीधे रास्ते की तरफ़ हिदायत करता है।''

सनातन वैदिक धर्म यानी वेद, उपनिषद और गीता से सिद्ध होता है कि दैहिक, दैविक और भौतिक तीनों प्रकार की शान्ति पाने का और मुक्ति यानी मोक्ष पाने का सीधा और सरल रास्ता 'ला इला-ह इल्लल्लाह' यानी 'अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं' यानी इस्लाम है।

इस्लाम के अनुसार क़ियामत के दिन पुनरोत्थान होगा। यह एक तर्कपूर्ण सत्य है क्योंकि आत्मा अपने कर्मों के फल के अनुसार मिलनेवाले जन्नत के सुख या दोज़ख़ (यानी नरक) के कष्टों का अनुभव तभी कर सकती है जब उसे उसका शरीर स्वस्थ अवस्था में पुन: प्राप्त हो।

इस तरह हज़रत मुहम्मद (सल्ल0) जिस इस्लाम को लेकर आए वह कोई नया धर्म नहीं है। लेकिन निश्चित रूप से इस्लाम समयानुकूल संशोधित सत्य धर्म है।

उपर्युक्त प्रमाणों के अनुसार तौहीद (यानी एकेश्वरवाद) के आधार पर इस्लाम के सबसे नज़दीक अगर कोई धर्म है तो वह है सनातन वैदिक धर्म।

लेकिन इस्लाम में तौहीद (यानी एकेश्वरवाद) के प्रति जो आस्था और समर्पण है वैसा और कहीं नहीं।

इस्लाम में यह भी व्यवस्था की गई है कि एकेश्वरवाद (तौहीद) की या क़ुरआन मजीद की आयतों की शुद्धता बनी रहे, ऐसी व्यवस्था और कहीं नहीं है।

मैंने महसूस किया है कि इस्लाम पर विश्वास लानेवाले के मन में अल्लाह (यानी परमेश्वर) का जो डर रहता है, वैसा और किसी के मन में नहीं।

इन्हीं विशेषताओं के कारण इस्लाम श्रेष्ठ धर्म है।

यहां दुर्भाग्य की बात है कि एकेश्वरवाद के सत्य को बतानेवाला सनातन वैदिक धर्म आज किताबों में ही सिमट कर रह गया है उसके स्थान पर बहुईश्वरवाद (यानी शिर्क) का असत्य आ गया है। यहाँ आज भी नए-नए देवता, ईश्वर के नए-नए अवतार बनते जा रहे हैं। यदि टी0 वी0 अथवा किसी फिल्म में किसी व्यक्ति को ईश्वर का अवतार बना दिया जाए, महिमा मंडित कर दिया जाए, तो यहाँ जनता उसकी पूजा करना शुरू कर देती है। कई तो अपने को साक्षात ईश्वर ही कहते घूम रहे हैं और जनता उनके पीछे-पीछे भाग रही है। दु:ख की बात है कि असत्य का जितना बोलबाला हमारे यहाँ है उतना कहीं नहीं है। ईश्वर सबको सद्बुद्धि दे। लोग अपनी बुद्धि और विवेक दोनों से ही जैसे काम नहीं ले रहे हैं।

तनिक सोचें!

ये हमारे भटके हुए लोग ध्यान दें कि जिस पृथ्वी में हम रहते हैं, वह सूर्य (जो कि एक तारा है) का चक्कर लगानेवाला एक ग्रह है। सूर्य का चक्कर

लगानेवाले ऐसे कई ग्रह हैं और इन ग्रहों के भी अलग-अलग चक्कर लगानेवाले कई-कई उपग्रह हैं, जैसे हमारी पृथ्वी का उपग्रह चन्द्रमा है जो पृथ्वी का चक्कर लगा रहा है। सूर्य के ये ग्रह हमारी पृथ्वी से कुछ छोटे भी हैं और बृहस्पति जैसे इतने बड़े भी कि हमारी पृथ्वी जैसी हज़ारों पृथ्वी उसमें समा जाएं। सूर्य और सूर्य के इन ग्रहों-उपग्रहों (यानी सौर मण्डल) के बीच हमारी पृथ्वी का अस्तित्व बहुत छोटा है।

हमारा सूर्य हमारी आकाशगंगा (Galaxy) का एक तारा है। इस आकाशगंगा में लगभग दो सौ अरब तारे (यानी सूर्य) हैं, जिनमें बहुत से तारे हमारे सूर्य से हज़ारों गुना बड़े और चमकदार हैं।

ब्रह्माण्ड में हमारी आकाशगंगा जैसी अरबों-खरबों आकाशगंगाएँ हैं जिनमें खरबों ऐसी आकाशगंगाएँ हैं जिनमें हमारी आकाशगंगा से लाखों गुना तारे (सूर्य) हैं। तारों की दूरियाँ इतनी अधिक होती हैं कि इसे मील या किलोमीटर में नापने की जगह प्रकाशवर्ष में नापा जाता है। हमारी पृथ्वी से दूर स्थित आकाशगंगा की अभी तक अधिकतम दूरी तेरह अरब बीस करोड़ प्रकाशवर्ष नापी गई है।

यह दूरी कितनी हुई इसका अन्दाज़ा इससे लगाइए कि प्रकाश एक सेकेण्ड में लगभग तीन लाख किलोमीटर चलता है। इस हिसाब से वह एक घंटे में 108 (एक सौ आठ) करोड़ किलोमीटर दूर जाता है। यह गति आजकल हवाई जहाज़ की अधिकतम गति (1500 किलोमीटर प्रति घंटा) का सात लाख बीस हज़ार गुना और राकेट की अधिकतम गति (तीस हज़ार किलोमीटर प्रति घंटा) का 36 हज़ार गुना तेज़ हुई।

इतनी तेज़ गति से प्रकाश लगातार एक साल चलता रहे तो वह नौ लाख छियालीस हज़ार अस्सी करोड़ किलोमीटर की दूरी तय करेगा। नौ लाख छियालिस हज़ार अस्सी करोड़ किलोमीटर की इसी दूरी को एक प्रकाशवर्ष की दूरी कहा जाता है।

प्रकाश अपनी इस गति से लगातार तेरह अरब बीस करोड़ साल तक चलकर जितनी दूरी तय करेगा वह दूरी तेरह अरब बीस करोड़ प्रकाश वर्ष हुई, जैसा कि ऊपर बताया गया है कि अभी तक अधिकतम इतनी दूर स्थित आकाशगंगा देखी गई है।

यह दूरी तो केवल हमारी आकाशगंगा और दूसरे स्थित आकाशगंगाओं के बीच की है जो नापी जा सकी है। ब्रह्माण्ड तो सब ओर ऐसे ही फैला हुआ है और जो यह दूरी नापी गई है वह अन्तिम नहीं है। खगोलशास्त्री मानने लगे हैं कि

ब्रह्माण्ड की विशालता का जो ज्ञान उन्हें है, वास्तविक ब्रह्माण्ड में वैसे खरबों ब्रह्माण्ड समा जाएं। कुल मिलाकर आज के विज्ञान के हिसाब से अल्लाह (यानी परमेश्वर) की यह रचना अनन्त है जो मनुष्य की बुद्धि और गणना से परे (बाहर) है।

यदि हम ईश्वर द्वारा रचे गए ब्रह्माण्ड और उसके जीव-जन्तु तथा वनस्पति और प्रकृति की अनुशासित व्यवस्था को देखें, उस पर गहराई से सोचें तो ईश्वर की असीमित और अनन्त ताक़त देख उसके प्रति विश्वास और श्रद्धा से मन भर जाता है।

उदाहरण के लिए जैसे पृथ्वी को लें, यह ईश्वर द्वारा जीवन के लिए रची गई कितनी व्यवस्थित और सुनियोजित योजना है। यहाँ जीवन के लिए सारी आवश्यक परिस्थितियाँ प्रकृति द्वारा कैसे योजनाबद्ध ढंग से बनाई गईं। सूर्य से आ रही ज़हरीली पराबैंगनी किरणों से जीवन को बचाने के लिए आश्चर्यजनक ढंग से ओज़ोन की पर्त बिछाई गई। जीव के खाने-पीने की तरह-तरह की व्यवस्था की गई। यह सब इतना व्यवस्थित है कि अगर हम इस विषय पर गहराई से सोचते हैं तो आश्चर्य में पड़ जाते हैं। यह सब अपने आप नहीं हुआ बल्कि अवश्य ही किसी सत्ता ने यह व्यवस्था बनाई।

विज्ञान का नियम है कि बिना बल या ऊर्जा के कोई कार्य नहीं हो सकता। इन कार्यों में जो ऊर्जा लगी, वह चाहे गतिज ऊर्जा हो या स्थितिज, उसे बल या शक्ति कहाँ से मिली ? यदि सूर्य से तो सूर्य में यह कहाँ से आई? यदि उसके पदार्थ के परमाणु की नाभिकीय अभिक्रिया (nuclear reaction) से, तो यह अभिक्रिया कैसे शुरू हुई? या इसके लिए वह पदार्थ कहाँ से आया ? सवाल पर सवाल करने से बात वहीं पर आती है कि कैसी भी ऊर्जा हो बिना बल या शक्ति के वह उत्पन्न नहीं हो सकती !

दूसरे शब्दों में, बल से ऊर्जा है और ऊर्जा से बल। इसी तरह यदि पदार्थ से ऊर्जा निकली तो उस पदार्थ का अस्तित्व ऊर्जा से ही सम्भव है यह प्रकृति का नियम है और प्रकृति विशुद्ध विज्ञान है। अन्त में वही प्रश्न खड़ा है कि बीज से पेड़ हुआ कि पेड़ से बीज? नास्तिकों व असत्यवादियों के पास इसके उत्तर में केवल अटकलबाज़ियां ही होंगी।

ब्रह्माण्ड में या पृथ्वी में जीव कैसे और कहाँ से आया? मनुष्य सहित पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े पहली बार कैसे पृथ्वी पर आए? उनकी आश्चर्यजनक और विचित्र रचना को देखें- आँख, कान सहित अन्य इन्द्रियों को देखें और इसपर गहराई तक सोचें तो क्या नहीं लगता कि सब कुछ जैसे किसी ने योजना बनाकर

किया हो। सृष्टि को बढ़ाने के लिए किस तरह सभी जीवों में कामवासना को डाला गया, यदि यह वासना न होती तो जीव-जन्तु अपनी आबादी को न बढ़ाते। ऐसी विचित्र और आश्चर्यजनक सृष्टि (यानी मख़्लूक़ात) की रचना परमेश्वर के अतिरिक्त कोई नहीं कर सकता।

यह तो इस अनन्त ब्रह्माण्ड में एक कण की हैसियत रखनेवाली पृथ्वी का हाल है। अब सोचें कैसे व्यवस्थित ढंग से उपग्रह ग्रह का; ग्रह तारे का; तारा आकाशगंगा का और आकाशगंगा ब्रह्माण्ड में चक्कर काट रही है, यदि इनमें यह गति न दी गई होती तो इनका अस्तित्व ही न होता।

आख़िर कौन है इनको गति देनेवाला? कुछ नास्तिक या अज्ञानी कहेंगे कि ब्रह्माण्ड में हुए महाविस्फोट ने इनको गति प्रदान की, तो हमारा प्रश्न है कि यह विस्फोट होने की परिस्थितियां किसने पैदा कीं ? फिर वही प्रश्न पर प्रश्न जिसका अन्तिम उत्तर देना इंसानी दिमाग़ की सीमा से बहुत बाहर है।

फिर आज इंसान के बनाए उपग्रह (सैटेलाइट) को पृथ्वी की कक्षा में इस तरह स्थापित करने के लिए कि वह अपने आप उसका चक्कर लगाता रहे, यह गणना की जाती है कि उसे राकेट से कितने किलोमीटर प्रति घंटा की स्पीड से फेंका जाए। अब प्रश्न यह है कि महाविस्फोट से अनन्त तारों के बनने का जो पदार्थ फैला उन सबके लिए अलग-अलग यह गणना कैसे हुई या किसने की, जिससे अनन्त तारों का वह पदार्थ (जिनसे लाखों किलोमीटर व्यास यानी मोटाई वाले अनन्त विशाल तारे बने और अभी बन रहे हैं) अलग-अलग अपनी-अपनी कक्षा में स्थापित होकर अपने निश्चित रास्ते पर चक्कर लगाने लगे। क्या यह सब अपने आप हो सकता है ? मनुष्य का विवेक और तर्क इसका उत्तर 'नहीं' में देता है।

ईश्वरीय किताब क़ुरआन में इसे बार-बार सर्वशक्तिमान अल्लाह (यानी परमेश्वर) का ही चमत्कार कहा गया है। इसी तरह वेदों में इस अनन्त ब्रह्माण्ड को उस एक परमेश्वर (यानी अल्लाह) से उत्पन्न हुआ बताया गया है जो अनादि और अनन्त है।

यह अनन्त ब्रह्माण्ड एक अनन्त अबूझ पहेली है जिसकी रचना अपने आप नहीं हुई क्योंकि अपने आप कुछ नहीं होता, होने के पीछे कारण होता है और इस अनन्त ब्रह्माण्ड के होने का कारण उस एक परमेश्वर (यानी अल्लाह) के अतिरिक्त कोई नहीं है, सभी प्रश्नों का यही एक मात्र सन्तोषजनक उत्तर है।

यह सब विस्तार से बताने का उद्देश्य यह है कि इस अनन्त ब्रह्माण्ड को रचनेवाला, उसे चलानेवाला और उसका विनाश (यानी क़ियामत) करनेवाला ईश्वर; इस पृथ्वी पर जन्म लेकर, कमा-खाकर, बीमार होकर, बूढ़ा होकर मरने वाला व्यक्ति नहीं हो सकता, जिसकी हैसियत इस अनन्त ब्रह्माण्ड से तुलना में शून्य जैसी हो।

तर्कशक्ति कहती है कि ऐसा ईश्वर खाने-पीने की ज़रूरतों से परे होगा, किसी लिंग से परे होगा, कामवासना से परे होगा, क्योंकि वह स्वयं उस आनन्द का स्रोत है जो आनन्द, कामवासना में मनुष्य को प्राप्त होता है। वह निराकार है उसकी न तो कोई माँ है न बाप, न बहन है न भाई, न पत्नी है और न कोई बेटी है न बेटा। उसका न तो जन्म होता है और न वह मरता ही है और यह अल्लाह (यानी परमेश्वर) के अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है।

इस अनन्त ब्रह्माण्ड को रचनेवाला अल्लाह (यानी परमेश्वर) अजन्मा है, अविनाशी है, सर्वशक्तिमान और अनन्त है उसके समान दूसरा कोई नहीं है।

'पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।'

> भावार्थ- वह (परमेश्वर) पूर्ण है और (उसकी) यह (रचना ब्रह्माण्ड) भी पूर्ण है क्योंकि पूर्ण से ही पूर्ण की उत्पत्ति होती है। (यहाँ पूर्ण का मतलब 'अनन्त' है। अभी ऊपर हम ब्रह्माण्ड को अनन्त सिद्ध कर चुके हैं और अनन्त ही एक मात्र ऐसी पूर्णता है जो अनन्त को उत्पन्न कर सकती है।)

इसका भावार्थ है कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर अनन्त है और उसकी यह रचना ब्रह्माण्ड भी अनन्त है क्योंकि अनन्त से ही अनन्त की उत्पत्ति होती है।

इस्लाम ने सत्य का नारा 'अल्लाहु अक्बर' (यानी अल्लाह सबसे बड़ा है) और 'ला इला-ह इल्लल्लाह' (यानी अल्लाह के अलावा दूसरा कोई पूज्य नहीं) के रूप में इस महान सत्य का पैग़ाम दुनिया को दिया।

इससे निष्कर्ष निकलता है कि इस्लाम का सत्य इस दुनिया में सदैव से, अनन्तकाल से मौजूद है। दूसरे शब्दों में, इस्लाम अनादि और अनन्त है।

पुस्तक के समस्त निष्कर्षों को देखने के बाद अन्तिम रूप से सिद्ध होता है कि इस्लाम, आतंक नहीं, आदर्श है। इस्लाम का यह आदर्श स्वीकार करने योग्य है।

हम सबका कर्त्तव्य

जैसा कि सिद्ध किया जा चुका है कि इस्लाम केवल मुसलमानों के लिए ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लिए है, मानवता के कल्याण के लिए है।

विदित है कि ऐसे इस्लाम को बदनाम करने के लिए, आतंकवाद को मुसलमानों से जोड़ने की बड़ी सुनियोजित साज़िश की जा रही है। मोबाइल से एस०एम०एस० भेजकर प्रचारित किया जाता है कि 'हर मुसलमान आतंकवादी नहीं है लेकिन हर आतंकवादी मुसलमान है।'

आतंकवादी यदि मुसलमान ही होते तो आतंकवादी हमले मुसलमानों पर न होते, हैदराबाद की मक्का मस्जिद तथा मालेगाँव (महाराष्ट्र) की ईदगाह पर ये हमले न होते।

आतंकवाद पर मुसलमानों के विचार जानने के लिए मैंने हज़ारों मुसलमानों से सम्पर्क किया। इनमें सभी मुसलमानों के अपने पड़ोसी ग़ैरमुसलमानों से भाई या मित्र जैसे सम्बन्ध मैंने देखे। उनमें से कोई भी मुसलमान नहीं चाहता कि निर्दोष लोगों की कोई हत्या करे। ग़ैरमुसलमान (जिन्होंने मुसलमानों का कुछ न बिगाड़ा हो) से नफ़रत करनेवाला, आतंकवाद समर्थक एक भी मुसलमान मुझे नहीं मिला।

इसके बाद भी यदि कोई ऐसा है तो उसके लिए सभी मुसलमानों को या इस्लाम को किसी प्रकार घुमा-फिराकर दोषी नहीं ठहराया जा सकता। वह अपवाद है और ऐसे अपवाद सब जगह होते हैं।

आतंकवाद के दुष्परिणाम मुसलमान और ग़ैरमुसलमान दोनों भुगत रहे हैं क्योंकि आतंकवाद का शिकार दोनों हो रहे हैं जबकि शक की नज़र से केवल मुसलमान ही देखे जा रहे हैं। आतंकवाद, आतंकवाद है उसे किसी धर्म या सम्प्रदाय से जोड़ना अन्यायपूर्ण है।

मुसलमान जानते हैं कि हर आतंकवादी हमले से उन लोगों को ताक़त मिलती है जो इस्लाम को बदनाम करना चाहते हैं, क्योंकि इन हमलों के बाद ग़ैर

मुसलमान भय से एक होकर लोकतंत्र यानी जम्हूरियत में एक ताक़त बन जाते हैं और इस ताक़त का फ़ायदा इस्लाम के विरोधी उठाते हैं।

ऐसे हर हमले के बाद यह ताक़त बढ़ती ही जाती है, उस क्षेत्र में तो यह अत्यन्त मज़बूत राजनीतिक ताक़त हो जाती है जहाँ आतंकी हमला बड़ा हुआ हो या बड़ी संख्या में हुआ हो । इसी लिए इस्लाम को बदनाम करनेवाली ताक़तें चाहती हैं कि इस तरह के हमले बराबर होते रहें, जिससे बैठे-बैठे मुफ़्त की ताक़त मिलती रहे। ऐसे में हम सबका यह कर्तव्य है कि ऐसे लोगों का यह उद्देश्य सफल न होने दें और देश को अराजकता से बचाएँ।

समर्पण

जैसा कि इस किताब की शुरुआत में मैंने लिखा है कि वास्तविक इस्लाम को जानने के बाद मुझे अपनी ग़लती का एहसास हुआ कि मैंने इस्लाम को लेकर पहले जो लिखा व बोला था वह असत्य और अनुचित था।

इस्लाम को नज़दीक से न जाननेवाले भ्रमित लोगों को लगता है कि मुस्लिम मौलाना, ग़ैर-मुस्लिमों से घृणा करनेवाले अत्यन्त कठोर लोग होते हैं। लेकिन बाद में जैसा कि मैंने देखा, जाना और उनके बारे में सुना उससे मुझे इस सच्चाई का पता चला कि 'मौलाना' कहे जानेवाले व्यवहार में सदाचारी होते हैं, अन्य धर्मों के धर्माचार्यों के लिए अपने मन में सम्मान रखते हैं। साथ ही वे मानवता के प्रति दयालु और संवेदनशील होते हैं। उनमें सन्तों के सभी गुण मैंने देखे। इस्लाम के ये पंडित आदर के योग्य हैं, जो इस्लाम के सिद्धान्तों व नियमों का कठोरता से पालन करते हैं, गुणों का सम्मान करते हैं, वे अति सभ्य और मृदुभाषी होते हैं।

ऐसे मुस्लिम धर्माचार्यों के प्रति भ्रमवश मैंने भी ग़लत धारणा बना रखी थी। जिसका प्रभाव मेरी पहली किताब 'इस्लामिक आतंकवाद का इतिहास' में भी पड़ा। अपनी इन ग़ल्तियों के प्रायश्चित के लिए मैं सार्वजनिक रूप से माफ़ी मांगना चाहता था। लेकिन समस्या यह थी कि मेरी लिखी किताब (इस्लामिक आतंकवाद का इतिहास) व बोले गए कैसेट पूरे देश में फैल चुके थे। अत: माफ़ी (यानी तौबा) हम इस तरह मांगना चाहते थे जिससे पूरा देश जाने तभी मेरे लिखे व बोले शब्दों का खण्डन उन लोगों तक पहुंच सकेगा जिन्होंने इन्हें पढ़ा या सुना है। इसके लिए प्रभावशाली हिन्दू और मुसलमान भाइयों के सहयोग की आवश्यकता थी। ऐसे लोगों का सहयोग प्राप्त करने के लिए देश के विभिन्न शहरों में जाकर मैं लोगों से मिलता रहा (जिनकी विचारधारा ऐसी थी।)

लोग साथ देने का आश्वासन देकर अगले दिन या बाद में बुलाते

लेकिन दुबारा मिलने पर वह अपने आश्वासन से पलट जाते। इस तरह मैं लगातार 6 महीने तक पूरे देश में दौड़-भाग करता रहा। इसमें मेरा बहुत पैसा और समय बर्बाद हुआ पर कोई सफलता नहीं मिली। आमदनी के बहुत सीमित साधन होने व इतनी दौड़-भाग के बाद भी सफलता न मिलने के कारण आख़िर मैं टूटने लगा।

एक रात बड़ी देर तक मुझे नींद नहीं आई यह सोचकर कि लगता है जो मैं करना चाहता हूँ वह परमेश्वर यानी अल्लाह नहीं चाहता इसलिए हमें यह प्रयास छोड़ देना चाहिए। यह सोचते-सोचते मुझे नींद आ गई। नींद में मुझे एक बड़े ही तेजस्वी पुरुष दिखाई दिए। उन्होंने मुझे हिलाते हुए कहा : ''उठो! मायूस मत हो। अल्लाह ने तुम्हारी तौबा क़बूल की। जैसे वह लिखा, वैसे ही यह लिख डालो। आगे कामयाबी ही कामयाबी है।''

इसके बाद मेरी नींद टूट गई। जगने के बाद मुझे बड़ी तेज़ घबराहट होने लगी। दिल बड़ी तेज़ी से धड़क रहा था। पाँच-सात मिनट उसी हालत में बैठने के बाद मैंने उठकर पानी पिया। घड़ी देखी तो रात के तीन बजकर कुछ मिनत हुए थे (मिनट मुझे याद नहीं) फिर बैठकर मैं सपने के बारे में सोचने लगा। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि 'जैसे वह लिखा, वैसे ही यह लिख डालो' का मतलब क्या है? थोड़ी देर तक सोचने के बाद मुझे लगा कि इसका मतलब यह हो सकता है कि 'जैसे वह (किताब यानी इस्लामिक आतंकवाद का इतिहास) लिखी वैसे ही यह (यानी जो सच्चाई है) लिख डालो।'

इसे ईश्वरीय आदेश (यानी ग़ैब से आया आदेश) मानकर मैंने यह निश्चय किया कि अब मैं इस विषय में किसी से मिलने नहीं जाऊँगा। बड़ा परिवर्तन यह हुआ कि पहले मेरा उद्देश्य अपनी ग़ल्तियों के लिए केवल तौबा करना ही था यानी अपने लिखे व बोले शब्दों का सार्वजनिक रूप से खण्डन कर माफ़ी मांगकर तौबा कर चुपचाप बैठ जाना था। तब यह किताब (इस्लाम, आतंक या आदर्श?) लिखने का विचार मेरे मन में दूर-दूर तक नहीं था। लेकिन यह आदेश आने के बाद अब मेरा उद्देश्य बदल गया। अब मैंने इस्लाम की सच्चाई पर यह किताब लिखने व व्याख्यानों के माध्यम से जनता को वास्तविक इस्लाम से परिचित कराने और इस देश में मुस्लिम समाज के साथ हुए भेद-भाव के लिए आवाज़ उठाने के लिए तथा हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच पैदा की

गई दूरियों को समाप्त करने के लिए 'भारतीय जन-सेवा फ्रंट' और 'हिन्दू मुस्लिम जन-एकता मंच' नामक संगठन बनाने का फ़ैसला किया। ईश्वर से प्रार्थना है कि इस कार्य में साथ देने के लिए वह लोगों को प्रेरणा दे।

इसके बाद मैंने प्राथमिकता के आधार पर इस किताब को लिखने का निश्चय किया। लेकिन मैंने जो किताब पहले लिखी थी उससे यह उलटा विषय था जिसपर मैंने न कभी सोचा था और न ही इस विषय में मुझे ज़्यादा जानकारी ही थी। फिर भी किसी अदृश्य ताक़त के प्रभाव से मैं इसे लिखने लगा।

किताब लिखते समय जिस प्रकार के संयोग हुए और जिस तरह आसानी से मैंने यह किताब लिखी उससे मुझे पूर्ण विश्वास है कि अल्लाह (यानी परमेश्वर) की छिपी मदद से ही मैं इसे लिख सका।

जब मैंने किताब लिखनी शुरू की तो शुरुआत में ही 24 आयतों वाले जिस पर्चे के बारे में लिखा है, वह पर्चा उस समय मेरे पास नहीं था यद्यपि मुझे यह तो पता था कि ऐसा पर्चा बाँटा गया है। उन 24 आयतों में कुछ आयतों को छोड़कर शेष आयतें याद नहीं थीं। मुझे उस समय पर्चे की कमी बहुत खल रही थी। मैं सोच रहा था कि यह पर्चा कहाँ से लाऊँ? लेकिन आश्चर्यजनक ढंग से उसी दिन शाम को दिल्ली से पर्चा के प्रकाशक हिन्दू राइटर्स फ़ोरम के संस्थापक डा० के० वी० पालीवाल का डाक से भेजा हुआ एक लिफ़ाफ़ा आया जिसमें 24 आयतों वाला पर्चा मुझे मिला। डाक से मिला वह लिफ़ाफ़ा और उसमें भेजी गई पर्चा सहित अन्य मुद्रित सामग्री हमारे पास अभी भी सुरक्षित है। उसके दूसरे दिन ही दिल्ली से निकलने वाला हिन्दू महासभा का पाक्षिक अख़बार 'हिन्दू सभा वार्ता' भी मुझे मिला जिसमें इस विषय में और विस्तार से छपा था। इस तरह दुबारा पर्चा मिलने के कारण ही मैं किताब का तीसरा भाग लिख सका।

मानवता के हित में सत्य और न्याय के इस कार्य की सफलता के लिए मैं परमेश्वर (यानी अल्लाह) से ही मदद माँगता हूँ कि वह कृपालु और दयालु मेरी मदद करे, मुझे रास्ता दिखाए।

यह किताब 'इस्लाम, आतंक या आदर्श' उस कृपालु और दयालु अल्लाह (यानी परमेश्वर) को ही समर्पित है जिसकी कृपा से यह लिखी जा सकी।

❍ ❍ ❍

पाठकों से अपील

किताब का यह हिन्दी संस्करण विशेष रूप से उन लोगों के लिए लिखा गया है जो इस्लाम को ठीक से नहीं जानते ताकि वे आतंकवाद के विषय में इस्लाम के दृष्टिकोण को सही मायने में समझ सकें। हमारे मुस्लिम भाइयों का कर्त्तव्य है कि वे अपनी सामर्थ्य (माली हैसियत) के अनुसार इस किताब को अधिक से अधिक संख्या में लेकर ग़ैर-मुस्लिमों को भेंट कर इसे पढ़ने के लिए प्रेरित करें।

हम इस किताब का अन्य भाषाओं में संस्करण भी प्रकाशित करवाना चाहते हैं। ईश्वर ने चाहा तो यह कार्य भी पूरा होगा। सत्य के इस संदेश को हम जन-जन तक पहुँचाना चाहते हैं। इसके लिए पाठकों से अपील है कि इस कार्य में सक्रिय होकर इसको आगे बढ़ाएँ।

सत्य के प्रति समर्पित जनता से, समाज की भलाई के इस कार्य और आगे के कार्य में हर प्रकार के सहयोग की आवश्यकता है।

निवेदक - स्वामी लक्ष्मीशंकराचार्य